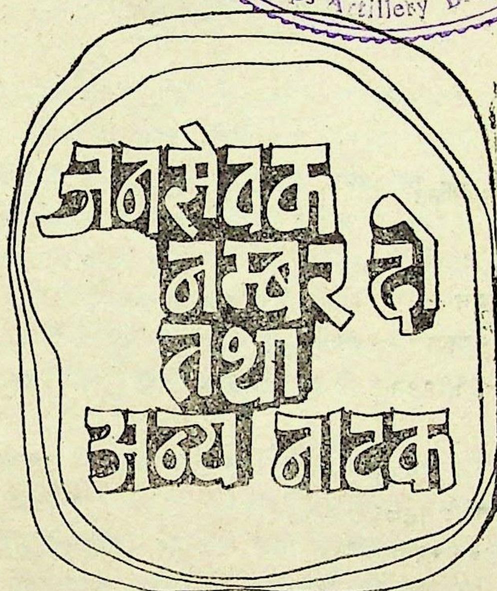


रघुराज दीक्षित

प्रारूप प्रकाशन
६४, चौक गंगादास, इलाहाबाद-२११००३

प्रकाशक :
प्रारूप प्रकाशन
६४, चौक गंगादास
इलाहाबाद-२११००३



प्रथम संस्करण : १९८६
मूल्य : ३५·०० रुपया



मुद्रक :
नील राज प्रेस, ३३९/३९८ ए, शाहगंज इलाहाबाद–२११००३

JANSEWAK NUMBER DO TATHA ANYA NATAK
(Plays) By
RAGHURAJ DIXIT

Price : Rs. 35·00

नाटकों के बारे में

तीन नाटक आपके हवाले हैं । इनमें नया शायद आपको कुछ भी न मिले। नाटक में प्रस्तुत संदर्भ तथा घटनायें आपके तथा हमारे अगल-बगल की हैं । ये ही नाटक की विषय-वस्तु हैं। विषय काफी लम्बे थे और सम्भव है, मैं वानगी भी न पेश कर पाया हूँ, पर मैंने उस रसोइया का हक जरूर अदा करने की कोशिश की है जो पूरी-की-पूरी रसोई के बारे में आपको एक गन्ध दे दे।

नाटकों की सामग्री के रूप में समय-समय पर प्रकाशित होने वाली कमीशनों की रिपोर्टें, भाषण तथा साथियों की गुफ्तगू मेरा कच्चा माल रही हैं।

साहित्यिक दृष्टि से यह नाट्य रचनाएँ कहां तक सफल हैं, इसका फैसला पाठक गण करेंगे। पर मुझे विश्वास है कि इन रचनाओं के माध्यम से मैंने वर्गीय समझदारी को साफ करने की कोशिश की है। हो सकता है, मेरी इन नाट्य रचनाओं में समीक्षकों को कलात्मक श्रेष्ठता की कमी नजर आये। लेकिन मैंने सामान्य जन को जिस 'तंत्र' के क्रूर, हिंसक व नाटकीय चरित्र के बारे में अवगत कराना चाहा है अगर मैं इस प्रयास में सफल हूँ तो यही इन रचनाओं की सबसे बड़ी कलात्मकता है।

इन नाट्य रचनाओं को आप तक पहुँचाने का साहस जिनसे मुझे मिला उनमें प्रदीप, अर्जुन प्रसाद, छोटेलाल, राजेश, विनय श्रीकर, वीरेन्द्र यादव का नाम मैं कभी नहीं भूल सकता जिन्होंने न केवल मुझे बहुमूल्य सुझाव दिए बल्कि मेरा ढाढ़स भी बढ़ाया।

बात अधूरी ही रह जायेगी यदि मैं अपनी गृहसंगिनी पुष्पा को धन्यवाद न दूं। बेचारी ने सब्जी के लिए नहीं कहा होगा, बच्चों को स्कूल पहुँचा दिया होगा। इतना ही नहीं, मेरे सारे कलम घिस्सू मिजाज और रँगे हुए कागजों को पहले उसी ने झेला है, जजमेंट दिया है।

रघुराज दीक्षित

युनाइटेड बैंक ऑफ इण्डिया,
४, अमीनाबाद पार्क,
लखनऊ।

जनसेवक नम्बर दो

पात्र-परिचय

जनसेवक — महिला सेक्रेटरी

डायरेक्टर

सख्त सिंह

मुलायम सिंह

कवि

लेखक

सचिव : सात

पत्रकार : पाँच

चपरासी

एक, दो, तीन, किसान, हरिजन आदि ।

(मंच पर गाना होता है)

हम आजादी के दीवाने,
ये आजादी के परवाने……
हम बीते कल की बात नहीं जपते हैं,
हम पछताओ का ठाठ नहीं मढ़ते हैं,
जब धरती के हर कोने में हम भोर किया करते हैं।
ये आजादी के दीवाने तब चैन लिया करते हैं।
हम आजादी……
इन हाथों से जुल्मों का साहस तोला है,
यह ख़ून सदा तानाशाहों पर खौला है,
जब फांसी पर हम इन्कलाब का नाम लिया करते हैं।
ये आजादी के दीवाने तब चैन लिया करते हैं।
हम आजादी……
कंगन ने माटी के माथे फोड़े हैं,
बचपन ने सिंहों के जबड़े तोड़े हैं,
जब दलितों के ही अपने सर अन्जाम लिया करते हैं।
ये आजादी के दीवाने तब चैन लिया करते हैं।
हम आजादी……

हम मुक्तिबोध, नजरुलइस्लाम, निराला,
हम हो ची मिन्ह, लेनिन, डा० चेग्वरा,
जब लाल फौज के कदमों पर हम कदम दिया करते हैं।
ये आजादी के दीवाने तब चैन लिया करते हैं।
हम आजादी……

(बेंत घुमाते हुए डायरेक्टर का प्रवेश। गीत गाने वालों को भगाता हुआ।

डायरेक्टर : भागो-भागो, क्या हुड़दंग मचा रक्खा है। यहाँ नाटक होना है, नाटक। दर्शकों, मेरा खानदानी नाम रंगा है। नौटंकी का रंगा। पढ़ लिख लेने के नाते अपने को डायरेक्टर कहता हूँ। यहाँ एक नाटक का रिहर्सल करना चाहता हूँ। एक्टर सब नये हैं, बिल्कुल नये खिलाड़ी। ठोंक पीट कर तीस वर्षों में इन्हें पार्ट याद करा पाया हूँ। इसीलिए जो एक्टर असफल रहेगा, कम्पनी से निकाल दिया जायगा। (दोनों पर हाथ रख कर) ये मेरे दो चेले हैं। सख्त सिंह और मुलायम सिंह। यह इनका बपौती नाम नहीं है, सिर्फ कम्पनी का नाम है। अरे हाँ, आप लोगों में से किसी का नाम हो तो माफ करना। सज्जनों। पुरखों से मेरे घर यही पेशा होता आया है। दादा ने हिन्दू राजा देखा। बाबा ने मुसलमान हुकूमत और चाचा ने अंग्रेज लाट साहब। माँ-बदौलत को इस घटिया जमाने का चार्ज मिला है। (हैट उतार कर थोड़ी देर दर्शकों की ओर झुका रहता है) अब आप लोग कहिए कि लाम पर चढ़ूँ।

दर्शकों में से : हाँ, हाँ, चढ़ो लाम पर।

डायरेक्टर : (एक को इशारा करके) हाँक लाओ भई सबको।
(सख्त सिंह सर झुकाकर चला जाता है।)

डायरेक्टर : मुलायम सिंह परदा खुलवाओ।

(मुलायम सिंह कमर को बेल्ट ठीक करते हुए चल देता है। डायरेक्टर भी इधर-उधर मच पर निगाह डाल चला जाता है)

प्रथम दृश्य

: राज तिलक :

(एक कमरा। एक अदद तखत। तखत पर एक कुर्सी। छोटी मेज। मुख्य पात्र कुर्सी पर बैठा है। बाएँ बाजू के सहारे महिला सेक्रेटरी बैठी है। पात्र गम्भीर मुद्रा में हैं। उनका चपरासी तखत के नीचे स्टूल पर बैठा है। उसके दो सहायक हाथ में कागज लिये अगल-बगल खड़े उसके आदेश को प्रतीक्षा कर रहे हैं।)

(डायरेक्टर मददगारों में से एक की ओर इशारा करता है।)

सख्त सिंह : (कुर्सी पर बैठे पात्र से) शपथ लीजिये, मान्यवर।

डायरेक्टर : (बीच में खड़े होकर) नो···नहीं। (मददगार की ओर देखते हुए) यह पहला वाला नाटक नहीं है भाई। इसे दूसरे वाले नाटक का डायरेक्शन दो।

मुलायम सिंह : (सिर हिलाते हुए) बिल्कुल ठीक सर। इस दूसरे वाले नाटक का पन्ना पलटना चाहिए। (सख्त सिंह की तरफ देखकर) बेवकूफ कहीं के।

सख्त सिंह : (चेहरा तमतमा जाता है। जनसेवक जो कुर्सी पर बैठे हैं, उनकी ओर देख कर, जरा रोब से) पिछले नाटक

में तुमने ही जनसेवक का पार्ट किया था ?

जनसेवक : जी; वह मेरा भाई था।

सख्त सिह : तो तुम्हारा नाम ?

जनसेवक : जी, जनसेवक।

सख्त सिह : (परेशान सा) क्या मुसीबत है, घर भर का एक ही नाम। अमां नम्बर तो होंगे, एक दो···?

जनसेवक : जी। दो नम्बर······दो नम्बर जनसेवक। जनसेवक नम्बर दो।

सख्त सिह : (झल्लाया सा) अच्छा-अच्छा होगा जनसेवक नम्बर दो ही सही। (स्वगत) ससुर होगा तो कबरे का छिबरा ही। (प्रकट) हाँ तो रिहर्सल शुरू करो।··· इस कुर्सी को उलटा करो। इसी पर बैठ जाओ। यह कागज पढ़ो खड़े होकर।

डायरेक्टर : क्या कर रहे हो यार। (सख्त सिह की ओर गुस्से से देखकर) इस तरह तो पिछले नाटक में प्रजेन्ट किया गया था। इस नाटक में यह कागज सेक्रेटरी को दो। (फिर रुककर कुछ सोचते हुए) लेकिन यह कागज यहाँ नहीं पढ़ा जायगा।

सख्त सिह : तो कहाँ पढ़ा जायेगा, सर ?

डायरेक्टर : कब्रिस्तान में, खाक-पत्थर कुछ भी समझ नहीं सकते। मालूम नहीं जनता परिवर्तन चाहती है, परिवर्तन। नाटक में हलका सा रद्दोबदल करो और जनता समझे कि नया प्रजेन्ट किया जा रहा है। इस तरह बाजार गरम होता है। ऐसे होती है मातहती। समझे। अच्छा चलो, काम शुरू करो।

सख्त सिह : (कुर्सी पर बैठे हुए पात्र से) हाँ तो यह कागज तुम्हें यहाँ नहीं कब्रिस्तान में पढ़ना है और सुनो तुम्हें ही

नहीं तुम्हारे घर भर को पढ़ना है और इस तरह तुम्हें जनता के मन में यह सिक्का जमाना है कि न तुम पहले वाले जनसेवक हो और न यह पहले वाला नाटक। ताकि जनता को पता चल जाये कि हमारे डायरेक्टर में नया नाटक देने का दम है।···चलो तैयारी करो। (जनसेवक उठकर चलने लगता है। सेक्रेटरी फाइल दबाये उसके पीछे हो लेती है।)

डायरेक्टर : अबे रुक ! साला एकदम नाटक ही कर रहा है। जानते नहीं कब्रिस्तान कहीं दूर नहीं। यहीं है, जहाँ तुम बैठे हो। समझ लो तुम जहाँ तक देख सकते हो सब नंगे-भूखे अपाहिज, बेवकूफ, कमजोर और मरे हुए लोग हैं।···पढ़ो।

जनसेवक : (पढ़ता है खड़े होकर) मैं जनसेवक द्वितीय ईश्वर और पोथी की सौगन्ध खाकर कहता हूँ···

डायरेक्टर : (बीच में टोकते हुए) बस-बस इसी तरह पढ़ना है। (सख्त सिंह की तरफ इशारा करते हुए) सुनो शपथ में कुछ बदल दिया है या नहीं ?

सख्त सिंह : हां सर, बिल्कुल बदला है। जैसे परिवार नियोजन की जगह परिवार कल्याण, नेहरू की जगह गाँधी, बड़ा की जगह छोटा, शहर की जगह गाँव, घूस की जगह प्रोत्साहन, काला की जगह सफेद और हर नाम के पहले जनता जोड़ दिया है जैसे जनता गाड़ी, जनता बस, जनता भोजनालय, जनता सिनेमा, जनता रिक्रि-येशन क्लब···।

डायरेक्टर : बस बस वेरी गुड। आज तुमने भरोसे का काम किया है। आज से तुम मेरे डिप्टी।

सख्त सिंह : सर दरोगा बनाया होता तो आपातकाल में खुश,

बहाल-काल में भी खुश।

डायरेक्टर : (गम्भीर होकर) बेकार की बातें नहीं। काम करो।

सख्त सिंह : सर इसके बाद बिरदावली होगी ?

डायरेक्टर : हाँ, हाँ वही तो होता है राजतिलक के बाद। यह सीन सभी नाटकों के लिए जरूरी है।

सख्त सिंह : तो नाम क्या चारण रखा जायेगा ?

डायरेक्टर : अमाँ यार नाम ही तो बदले जाते हैं। वैसे राजा के पास जिस जमाने में भी ऐसे लोग रहा करते हैं वे होते चारण ही हैं।

सख्त सिंह : भांट रखिये सर, जनवादी होगा।

डायरेक्टर : यह जाति विशेष का नाम है। छोड़ो हटाओ वैसे पिछले नाटक वाला ही नाम रख लो... बुलाओ उनको।

कवि : (प्रवेश के साथ ही जेब से कागज निकाल पढ़ने की मुद्रा बनाता है। कुर्ते की बाँहें समेटता है।)

मुलायम सिंह : हाँ तो कवि जी पिछले खेल में कैसे पढ़ी थी कविता ?

कवि : (खखार कर गला साफ करते हुए) महाकाली, भद्रकाली, देश तारिणी बीस भुजा देवी के कर कमलों में समर्पित।

मुलायम सिंह : लेकिन इस नाटक में कैसे पढ़ोगे, याद है पार्ट ?

कवि : आदरणीय, निर्विकार, निष्काम, जन नायक, लोक पूज्य के कर कमलों...

मुलायम सिंह : रुको कर कमल नहीं, कर की जगह चरण करो। चरण कमलों में।

डायरेक्टर : एस, बिल्कुल ठीक।

मुलायम सिंह : (गर्व का अनुभव करते हुए) हाँ तो शुरू करो। आदरणीय, निर्विकार, निष्काम, जन नायक, लोकपूज्य के चरण कमलों में परम श्रद्धेय दिनकरजी की कविता

तर्ज पर—सिंहासन खाली करो कि यह; जनसेवक आता है। एक जोशीली कविता पढ़ो।

कवि : (पुनः पढ़ने का मूड बनाता है)

मुलायम सिंह : (हाथ उठाकर रोकते हुए) कब लिखी यह कविता ?

कवि : अभी दो चार दिन पहले।

मुलायम सिंह : सत्यानाश हो तेरा। बोर कर दिया न। सब कहने को किसने कहा था ? नाटक है नाटक। कहो यह कविता उस समय लिखी, जब देश पर कहर ढाया जा रहा था। आजादी धूल चाट रही थी। भारत माता आपातकाल के रक्तिम चादर के नीचे छटपटा रही थी। हमारी आजादी के सपने रेत की दीवार की तरह ढह रहे थे। कहो कि उस वक्त मेरी लेखनी ने आग उगला। करवट बदल गयी वरना मैं पागल हो जाता।

कवि : ठीक है, यही कहूँगा।

मुलायम सिंह : तो ठीक है पार्ट याद हुआ। जाओ लेखक को भेजो। (लेखक प्रवेश के साथ पान की गिलौरी डिबिया से निकाल कर मुँह में रखता है और कुछ कहने को होता है।)

सख्त सिंह : (हाथ के इशारे से सबको रोकते हुए) ठहरो (डायरेटर की तरफ मुंह करके कहता है) सर यह जनसेवक तो बुत की तरह सिर्फ बैठा है। इसे भी तो कुछ बोलना चाहिए।

डायरेक्टर : उसके कारिन्दे तो बोल रहे हैं।

सख्त सिंह : सर पिछले खेल में भी तो यही हुआ था।

डायरेक्टर : कोई बात नहीं। यह सीन इसमें भी चलेगा।

सख्त सिंह : जो आज्ञा सर। (मुलायम सिंह से) शुरू करो।

मुलायम सिंह : हाँ तो लेखक जी अपना डायलोग बोलो ।

लेखक : (चुटकी लेते हुए) डायलोग नहीं डायलाग ।

मुलायम सिंह : हाँ, हाँ वही, जल्दी करो ।

लेखक : मैं जनसेवक जी का आवाहन कर रहा था । अपनी लेखनी से जनता के दिल में विश्वास जमा रहा था ।

मुलायम सिंह : और…?

लेखक : और इसके लिये जब सब ओर त्राहि-त्राहि मच रही थी मैं वानर का शरीर धारण करके आसन लगाये प्रभु की प्रतीक्षा कर रहा था ।

मुलायम सिंह : (स्वगत) देखा पट्ठे को, उस खेल में भी धांसू डायलोग बोला था । सिक्का जमा दिया था पूरी मेहफिल में । (प्रकट) उस खेल को देखने वालों ने अगर इस खेल में ऐसे बोलते देख लिया तो सैकड़ों तुम्हें गाली देंगे । चाटुकार कह कर थू-थू करेंगे ।

लेखक : कहने दीजिए । जिन्दगी तो सुख से कटेगी ।

मुलायम सिंह : (व्यंग्य से) पार्लियामेन्ट के मेम्बर ही बन जाओगे ।

डायरेक्टर : आपस में हँसी ठट्ठे नहीं, काम की बातें करो । (लेखक जाता है)

मुलायम सिंह : कोई तांत्रिक हाजिर है ?

डायरेक्टर : अरे नहीं भई, तांत्रिक को मत बुलाओ । वे सब इस जनसेवक के खानदानी गुरू हैं । कुर्सी छोड़कर पैर छूने लगेगा । गिड़गिड़ाने लगेगा । सारा नाटक बरबाद हो जायेगा । और गन्दे तावीज से तो यह वैसे भी डरता है । जानते हो जब कभी इसके पड़ोसी से लड़ाई होती है तो उससे निबटने की बजाय कुटी के बाबा के दिए हुए फूल खाने लगता है ।

मुलायम सिंह : तो जोतसी का पार्ट रहेगा इसमें सर ?

डायरेक्टर : खेल को बरबाद करना है क्या ? इस करेक्टर में भी कोई दम होता है। जनता खुद जानती है कि पूजा चढ़ा दो तो यह जोतसी शनि को जहाँ कहो वहाँ दफन हुआ दिखा दे। बृहस्पति को जब चाहो बरखास्त करा लो। पिछले खेल में रखा था एक ऐसा करेक्टर। मामला उलट गया है अब। जनाब करेक्टर की सारी भविष्य वाणियाँ गलत साबित हो गयी हैं। अगर कहीं इस नाटक में भी रख दिया तो और लोग भले ही इसे झेल जायें पर ये अखबार वाले तिल का ताड़ बना देंगे। जानते हो क्या करेंगे ये। घटना को सही समझ कर थीम की खाल उधेड़ देंगे। भला कौन समझाये इनको कि नाटक और हकीकत में कितना फर्क होता है।

मुलायम सिंह : ठीक है सर……(जनसेवक की तरफ देखकर) हाँ तो इस अंक का आखिरी काम।……डायलोग बोलो।

जनसेवक : (सेक्रेटरी की आँखों में आँखें डालकर देखता है। वह हौले से एक कागज आगे बढ़ा देती है और जनसेवक जी से सटकर खड़ी हो जाती है) मैं जनता का बहुत आभारी हूँ कि उसने मेरी पूंछ पकड़कर मुझे दल-दल से निकाल लिया। मैं आज सबसे कहता हूँ कि यदि मैं कोई गलती करूँ तो मेरा कान पकड़कर मुझे निकाल देना।

मुलायम सिंह : बस-बस ज्यादा मत बोलो। क्या धोबी-गद्दे में साबुन लगाता है। पहला जनसेवक कई लम्बे-लम्बे जुमले बोल चुका है। तुम्हें इस खेल में थोड़ा ही बोलना है।

(स्वगत) ज्यादा बोलोगे तो पकड़े जाओगे बेटे। (थोड़ा रुककर डायरेक्टर की ओर देखकर) सर बस परदा गिरवा दिया जाए।

डायरेक्टर : (सोचते हुए) ठीक है गिरवा दो। कुछ कमी होगी तो फिर सोच लेंगे।

मुलायम सिंह : चलो सब लोग।

परदा गिरता है।

दूसरा दृश्य

: दरवार :

(मुख्य सचिव सहित सारे लोग गोलदायरे में कुर्सियों पर बैठे हैं। बीच में एक ऊँची कुर्सी खाली पड़ी है। पात्र टिप-टाप ड्रेस में हैं। डायरेक्टर एक कोने में खड़ा है।)

मु० सचिव : (खड़े होकर) सियासत वलीअहेद के हाथ में नहीं रही। नया हुक्म पाने तक आप सब अपने कोट के कालर देखते रहिये। हमारा काम इस कुर्सी पर बैठने वाले की नहीं, कुर्सी की हिफाजत करना है।

(सायरन नुमा घंटी बजती है। पुतला जी का प्रवेश। पुतला जी कोई और नहीं हलका-सा मेकप बदले जन-सेवक जी ही हैं। सभी उठकर खड़े हो जाते हैं। वे खाली पड़ी ऊँची कुर्सी पर बैठ जाते हैं और उनके बैठने के बाद सारे लोग अपनी-अपनी जगहों पर स्थान ग्रहण कर लेते हैं।)

मु० सचिव : (पुनः खड़े होकर) बड़ी खुशी की बात है कि पुतला जी पधार गये हैं। सही माने में पुतला जी जनसेवक जी के ही दूसरे रूप हैं या यूं समझिये कि जनसेवक

जी दस्तखत हैं तो पुतला जी उनकी मोहर। हमारा काम इनके तथा इनके परिवार की खुशी के लिए पहले की तरह से काम करते जाना है।

डायरेक्टर : (हाथ के इशारे से मना करता हुआ) अब बैठ जाओ। भाषण देना तुम्हारा काम नहीं है। पुतला तुम ऐक्टिंग शुरू करो।

पुतला : सभी लोग उपस्थित हैं।

मु० सचिव : हाँ श्रीमन्।

पुतला : व्यवस्था की रिपोर्टिंग करो।

मु० सचिव : मान्यवर आपके हुक्म पर आपके रहने के लिए जमुना के किनारे एक पर्णकुटी बनायी जा रही है।

पुतला : पागल हो गये हो क्या ? हुकूमत कहीं चटाई पर बैठकर होती है ?

मु० सचिव : नहीं सर, सिंहासन पर बैठकर।

पुतला : तब कुटी बनाने की जरूरत नहीं। सिर्फ एक स्टेटमेन्ट जाना है अखबारों में, समझे ?

मु० सचिव : क्षमा करें श्रीमन्, कुटी बनाने का टेन्डर अभी निरस्त किये देता हूँ।

पुतला : ठीक है। आप लोग हमें कुछ जरूरी सुझाव दीजिए हुकूमत के संबंध में।

मु० सचिव : सर, अर्थ व्यवस्था में आमूल परिवर्तन करना चाहिए। मिलकियत को परिभाषा बदलनी चाहिए ताकि···

पुतला : (गुस्से से) ताकि क्या ? अगले चुनाव पर इस बात से कोई सीधी बात निकलेगी ?

मु० सचिव : जनता की दशा तो सुधरेगी श्रीमन्।

पुतला : अच्छा, जनता का मामला है। इसके लिए अधिक-से अधिक हम एक कमेटी बना सकते हैं।

(पुतले के अलावा सभी एक दूसरे की तरफ देखते हैं। जैसे कुछ तय हो गयी बात पर मुस्कराते हैं।)

गृह सचिव : श्रीमन्, मैं गृह सचिव हूँ। अभी-अभी सूरज कुंड से आया हूँ। इस देश में कानून और व्यवस्था बद से बद्तर होती जा रही है। मेरे निवेदन पर सरकार ध्यान दे।

पुतला : एक जाँच कमीशन बिठाकर तुम इस्तीफा दे दो।

गृह सचिव : (आश्चर्य से) यानी रिजिगनेशन !

पुतला : हाँ हाँ वही। दूसरों को मौका दो। (अन्य की तरफ मुंह करके) आप ?

ग्रा०वि०सचिव : (हड़बड़ाया-सा) जी, मैं ग्रामीण विकास सचिव हूँ।

पुतला : (हँसकर स्वगत) हूँ तुम मेरे काम की चीज हो (प्रकट) हाँ, तो बोलो।

ग्रा०वि०सचिव : गरीबी की रेखा के नीचे जीने वालों की तादाद ९५ फीसदी है और वह भी गाँवों में। इस ओर ध्यान दिया जाए।

पुतला : आँकड़े ठीक हैं ?

ग्रा०वि०सचिव : ठीक ही होंगे। वैसे हुकूमत जैसा चाहती है हम लोग अपने मन से घटा बढ़ा भी लेते हैं।

पुतला : वह आगे देखा जायेगा। ऐसा करो तुम भी एक कमीशन बैठा दो और ऐलान करवा दो कि शासन उनके लिए खजाना खोलने जा रहा है।

ग्रा०वि०सचिव : इसकी रूप रेखा क्या होगी सर ? गाँव में बड़े लोग हमेशा से सारी की सारी सरकारी मदद हड़पते रहे हैं।

पुतला : (झल्लाकर) तो बड़े लोगों को फांसी चढ़ाने के लिए नहीं कहा है। गरीबों की राहत के लिए सिर्फ डुग्गी पिटवाने को कहा है।

ग्रा०वि०सचिव : जो हुक्म सर।

श्रम सचिव : आपका श्रम सचिव होने के नाते मैं प्रणाम करता हूँ। प्रार्थना करता हूँ कि हड़तालें बढ़ती जा रही हैं। श्रमिकों में असंतोष व्याप्त होता जा रहा है।

पुतला : कमीशन बैठा दो।

श्रम सचिव : (आश्चर्य से) कमीशन बैठा दें सर!

पुतला : नहीं गोली चलवा दो।

श्रम सचिव : (आश्चर्य से ही) गोली चलवा दें!

पुतला : (भूल सुधारता सा) अच्छा-अच्छा यह काम तुम्हारा नहीं है। गृह सचिव का होता है। तो तुम बोलो उनसे कि वे दस साल इंतजार करें।

श्रम सचिव : दस साल बहुत होता है सर। वह घर में तवा चढ़ा-कर मजदूरी करने आता है।

पुतला : (झल्लाकर) तो तुम समझते हो कि उसके तवे पर मैं चढ़ जाऊँ और अगला चुनाव मैं अपने दाँत तोड़ कर लड़ूँ? टके के मजदूरों के लिए देश की अर्थ व्यवस्था चौपट कर दूँ? आखिर पूँजीपति देश के ट्रस्टी हैं। गाँधी जी ने यही कहा था।

डायरेक्टर : (आकर पुतले की पीठ ठोंकता है) शाबाश! क्या गाँधी जी का डायलाग याद किया है! सुखी रहोगे। मन लगा कर पार्ट अदा कर रहे हो।

पुतला : (गर्वीला होकर एक अन्य की तरफ देखता है और उँगली के इशारे से उठने के लिए कहता है)

योजना सचिव : (घबड़ाता हुआ-सा) जी मैं योजना सचिव हूँ। हुकुम कीजिए।

डायरेक्टर : (मुस्कुरा कर) घबराओ नहीं बेटे, घबराओ नहीं। मैं जानता हूँ कि पहले वाले खेल में तुम्हारा डायलाग

बिगड़ गया था। तो क्या जरूरी है कि इसमें भी बिगड़ जाए ? देखो कोई ख़ास बात नहीं है। सिर्फ तुम, लोगों को यह समझाते रहो कि तुम बहुत काबिल हो। तुम मुर्गे हो। तुम्हारे बोले बिना सवेरा नहीं होता। तुम्हारे बिना देश रसातल में जा सकता है। इस हालत में जो भी कहोगे यह जनता ताऊजी की बछिया की तरह हाँ-हाँ करके सर हिलाती रहेगी। और तो और, जनसेवक और पुतला सब हाँ-हाँ करेंगे, समझे ? झिझको नहीं, हो सकता है कि नाटक कम्पनी का अगला पुरस्कार तुम्हीं को मिल जाये।

योजना सचिव : हम प्रथम पंचवर्षीय योजना में विस्थापितों से निपटे। फिर समाजवाद लाने में लग गये। बड़ी-बड़ी फैक्ट्री लगाने में जुट गये। सुन्दरीकरण करने में पसीना बहाते रहे। पेड़ लगवाने में एड़ी-चोटी का पसीना एक करते रहे और नसबन्दी करवाने में आकाश-पाताल के कुलाबे मिलाते रहे। आखिर में भाषण दिलाने में यह पन बीत रहा है। और···

पुतला : ठहरो-ठहरो। मैं तुम्हारे पूर्व जन्म का हाल नहीं पूछ रहा हूँ। हम गाँधी जी के चेले हैं, समझे ? करो और भूल जाओ, अपराधी को माफ कर दो, चाहे उसने देशद्रोह ही क्यों न किया हो······हाँ, तो अब तुम्हें एक ऐसी योजना बनानी है जिसमें शहर और देहात लड़ जायें। देखो, तुम तो जानते ही हो कि हमें हुकूमत करनी है और हुकूमत करने का पुराना नुस्खा है— बाँटो और राज्य करो। तो शहर का मजदूर देहात से लड़ा दो, दूकानदार किसान से लड़ा दो। अभी यह प्रचार करवा दो कि शहरी मजदूर ही सब कुछ लिए

ले रहा है। तो इस स्थिति में दुरबल ग्रामीण मजदूरों, हम तुम्हारी क्या मदद करें ?

योजना सचिव : श्रीमन्, यह सब तब तक नहीं हो सकता जब तक देहात का मजदूर संगठित न हो जाय। कौन दिलायेगा मजदूरी उन्हें ? हमने पहले ही एक न्यूनतम मजदूरी बांध रखी है, पर मिली आज तक नहीं उन लोगों को। शहर का मजदूर, श्रीमन् इसलिए ले लेता है कि वह संगठित है।

पुतला : हूँ, कम्यूनिस्ट मार्का लगते हो। भई हमें तो सम्पूर्ण क्रान्ति मार्का सचिव चाहिए। इसलिए आज से तुम कूड़ा सफाई सचिव।

योजना सचिव : श्रीमन्, मुझसे कोई संवैधानिक भूल हुई ?

पुतला : संविधान क्या होता है ? बोलो, संविधान माने गीता, रामायण की तरह पूज्य पुस्तक। हम उसका पाठ करेंगे, सिर्फ पाठ। इसके अलावा कुछ भी करेंगे तो संविधान की निष्काम पूजा नहीं कहलायेगी। असली सेवा तो हमें गुरू जी की आज्ञा का पालन करना है। ये मेरे नहीं, मेरे जनसेवक जी के गुरू हैं। मैं तो मात्र दासानुदास हूँ—केवल मात्र पुतला। हमारे गुरू जी कह दें कि यह स्याह है तो हम कहेंगे कि हाँ गुरुदेव एकदम काला है। वे कह दें कि इस परम प्रिय का त्याग कर दो। तो हम कह दें कि हाँ गुरुदेव यही तो अनिष्ट का कारण है। लिहाजा भाई जान आपकी छुट्टी।

डायरेक्टर : (योजना सचिव को रोकते हुए) अरे बाबा क्यों टाइम खराब कर रहे हो, तुम्हें यह डायलाग नहीं बोलना था। इसे तो एडिट कर दिया गया था। भला हो इस

२

पुतले का, नहले पर दहला जवाब तो दिया। मैंने तो पहले ही कहा था कि यह करेक्टर विचारों से अलौकिक और कामों से एकदम कलजुगी है। अच्छा अब बोलो डायलोग।

योजना सचिव : (पुतला की ओर मुंह करके) हां सर, सड़कें कहां-कहां बनेंगी ?

पुतला : एक मेरी ससुराल तक, दूसरी मेरे फार्म तक और तीसरी मेरी...

योजना सचिव : (हें हें करते हुए) समझ गये सर। निर्माण कार्य और क्या होंगे ?

पुतला : मेरी कोठी वातानुकूलित होनी है।

योजना सचिव : और कार गैरेज ?

पुतला : सो तो है ही।

योजना सचिव : सर कुछ पुन्य कमा लीजिए।

पुतला : हाँ-हां, उपयुक्त पात्र की तलाश करो।

योजना सचिव : सो ढूंढ़ लिया है सर।

पुतला : (पुलकित होता हुआ सा) कौन है ?

योजना सचिव : पिछड़ी जातियां।

पुतला : किस पात्र से दान करेंगे ?

योजना सचिव : आरक्षण।

पुतला : (उठकर योजना सचिव को गले लगाते हुए) भरतहु ते मोहि अधिक पियारे। हे बन्धु तुम तो मेरे परम हितकारी हो। मेरे मन की बात कह दी। कहहु बालि तोहि देउँ जियाई।

डायरेक्टर : (गुस्से से) यह नाटक हो रहा है या रामलीला ?

पुतला : (हड़बड़ा कर बैठ जाता है अपनी जगह पर)

डायरेक्टर : (सारे पात्रों पर दृष्टि डाल कर कुछ देर देखते

रहने के बाद एक ओर इशारा करके उठने को कहता है)

विदेश सचिव : हे देव, मैं विदेश सचिव हूँ। मेरे लिए आदेश ?

पुतला : (खखार कर गला साफ करते हुए सम्भल कर बैठता है और कहता है) थोड़ा मेकअप कर लो। चेहरा बदलना आसान नहीं है। अपनी आवाज में हलका-सा सायलेंसर लगा लो, काम चल जायेगा।

वि० सचिव : आपकी पसन्द जिन्दाबाद।

व्यक्तिगत सचिव : सर मैं व्यक्तिगत सचिव हूँ।

पुतला : तो मैं दण्डवत करूँ ?

व्यक्तिगत सचिव : नहीं सर, सो तो मेरा ही माथा बहुत है। आप छोटी रियासतों के सुबेदारों के नाम बता देने का कष्ट करते तो मैं उन्हें चिट्ठी लिख देता।

पुतला : कितनी हैं रियासतें ?

व्यक्तिगत सचिव : सर हैं तो डेढ़ दर्जन के ऊपर। कुछ एक छोटे-छोटे इलाकों पर कबीलों का जोर है। अपने को सुबेदार बताए पड़े हैं।

पुतला : देखो शुभ काम हो या उसकी बात हो तो लड़ाई की बात अशुभ मानी जाती है।

व्यक्तिगत सचिव : तब सर बचे हुए इलाकों की बात करेंगे।

पुतला : (गम्भीर होकर) सूबेदारी की योग्यता नोट करो—वे तमाम लोग बुलाओ जो उसी डाल को काट रहे हों जिस पर वे बैठे हों। या वे लोग जो बिना ग्लेसरीन लगाये रोने का अभिनय कर सकते हों। सौ बातों की एक बात, वे अपने को कुंए का मेढक, लकड़ी के नीचे दबी हुई घास या कुछ ऐसे ही

समझते हों।

व्यक्तिगत सचिव : यह सोचने के लिए काफी वक्त चाहिए सर ! यदि जल्दी हो तो इधर-उधर से ही ले आयें।

पुतला : अबे, हमको और हमारे जनसेवक जी को तो नहीं गिन रहा है उसमें।

व्यक्तिगत सचिव : सर यह कहना तो दूर सोचना भी अपने शब्द-कोश में नहीं।

पुतला : अच्छा-अच्छा, सारे इलाकों में अपने-अपने सूबेदार भेज दो और ऐसी हालत कर दो कि पुराने सूबेदारों को अपना सूबा छोड़ना पड़े। यही नहीं सभी अपने सूबेदारों को मेरे बुढ़ापे का यह तजुरबा भिजवा दो कि सूबेदार के अलावा डिप्टी सूबेदार और तमाम कारिन्दे इसी सिद्धान्त पर चुने जायें तो हुकूमत चलाने में आनन्द आयेगा। (थोड़ा रुक कर) आदेश नम्बर दो—घरों को जेल तथा जेल को घर बनाना है। गुरु जी के हुकुम के अनुसार वह जमीन में गड़ा हुआ ताबीज खुदवा लिया जाय। शासन इस कार्य को प्राथमिकता दे।

व्यक्तिगत सचिव : और गरीबी मिटा दे ?

पुतला : यह चीज तो उस फिल्मी गाने की तरह हो गयी है जिसकी लोकप्रियता इतनी बढ़ी कि रिक्शे-तांगे वाले तक गाने लगे। भला बताइये, इस उमर में यह बात कहना अच्छा लगेगा ? फिर हम प्रजातंत्र में विश्वास करते हैं। चुनाव के वक्त आँसू बहाने के लिए भी तो कुछ मसाला चाहिए। (थोड़ा रुक कर) खैर पुराने फोटो हटवाना है।

डायरेक्टर : चुप ससुरे ! जो करना है इसको, वही जबान से कहे डाल रहा है। दिमाग खराब कर दिया। पता नहीं इस गधे को यह रोल मैंने दे ही क्यों दिया ?…अच्छा इस अंक में इतना ही। परादा गिरा दो।

परदा गिरता है।

तीसरा दृश्य

: यात्रा :

(मंच खाली है। डायरेक्टर और एक सहायक प्रवेश करते हैं। डायरेक्टर के हाथ में बेंत की छड़ी है। वह छड़ी के इशारे से एक-एक को बुलाता है और आदेश देता है।)

एक : (एक मोटा आदमी)···जी।

डायरेक्टर : माला लाये हो ?

एक : हाँ सर लाया हूँ।

डायरेक्टर : तुम चोर बाजारियों, सेठ-साहूकारों की तरफ से माला पहनाओगे।

एक : जी साब !

डायरेक्टर : (दूसरे को बुलाता है) तुम समाज सेवी संस्थाओं की तरफ से अभिनन्दन भी करोगे, समझे ?

दो : सर इस बार तो आपने हमें बड़े चमचे का रोल देने को कहा था।

डायरेक्टर : गधे हो। अभी तुम्हें आयात-निर्यात का लाइसेन्स कहां मिला है ? मैं इतना मूर्ख नहीं हूँ। मुझे मालूम है कि बड़े चमचे में क्या योग्यताएं होनी चाहिए।···हँसी

करना चाहते हो मेरी ?

दो : (सर लटका कर एक ओर खड़ा हो जाता है)

सहायक : सर यह माला पहनाने वाला रोल तो हम भी कर सकते हैं।

डायरेक्टर : (व्यंग्य से) तुम्हीं तो हो इस काम के परम सुपात्र। और जनसेवक जी के लड़के-बच्चों को माला कौन पहनायेगा। तुम्हारा बाप ? अपनी इमेज ही नहीं बनाना चाहता मूर्ख कहीं का।

सहायक : (हें-हें करता है) सो तो है सर। भला आप मेरा भला न चाहेंगे।

डायरेक्टर : (एक अन्य को बुलाता है) तुम्हें बीस लाख की थैली भेंट करनी है।

तीन : (आंखें फाड़कर) इतनी बड़ी रकम तो मैंने अपनी जिन्दगी में देखी भी नहीं।

डायरेक्टर : रियललाइफ में इतने बड़े नेता के साथ फटके भी नहीं होगे कभी। क्यों ?

तीन : सो तो है सर।···पर···

डायरेक्टर : पर-वर कुछ नहीं। बातें तो ऐसी मार रहा है जैसे कि अपनी जेब से ही दे रहा हो। कितनी बार कह चुका हूँ कि यह नाटक है। माल वहीं पहुँच जाता है जहां से आता है। सिर्फ एक सीन दे देना होता है। फिर तुम्हारा रोल तो मिल मालिक का है और वह भी चन्द मालिक-घरानों में से एक।

(थोड़ी देर रुक कर)

डायरेक्टर : अब एक दुबला-पतला किसान लाओ। जनसेवक लपक कर उसी के गले में माला डाल देगा। फोटोग्राफर फोटो खींच लेगा। इसके बाद एक हरिजन लाओ। वह

चाय की प्याली जनसेवक को देगा। तब फिर फोटोग्राफी समझे ?

सहायक : इन सबसे क्या होगा ?

डायरेक्टर : अरे भाई यही वह मसाला है जिससे जनसेवक फील्ड की सड़ी हुई लाश को बचाते आये हैं और अपनी खानदानी गद्दी को सदा सुहागिन देखते आये हैं।

सहायक : सर सभी नाटकों में एक ही काम देखते-देखते जनता ऊब जायेगी।

डायरेक्टर : कहा न, पागल हो। यहाँ की जनता भेड़ है, भेड़। बहुत ज़ल्द भूलती है। इतने सारे दर्शक बैठे हैं। सभी पुरानी बातों का मजा नये सिरे से ले रहे हैं। यह बहुत बड़ा देश है। उत्तर प्रदेश की जनता इससे ऊबेगी तो तमिलनाडु की जनता खुश होगी। कर्नाटक की जनता मुँह ऐंठेगी तो बिहार की जनता उसका मजा लेगी। चाहे जितना बड़ा अपकार कर दो। बस दो दिनों के लिए गद्दी से उतर जाओ। जनता तुम्हें माफ कर देगी। यह गाँधी का देश है। महात्माओं का देश है। यहाँ लोग एक गाल सहलाते रहते हैं और दूसरा चोट खाने को आगे कर देते हैं। (नेपथ्य से मोटर के हार्न की आवाज सुनायी देती है। 'जनसेवक जिन्दाबाद' के नारे भी तेज हो जाते हैं।)

डायरेक्टर : (झल्लाकर) साले कम्पनी वालों को नारे बोलने की बहुत आदत पड़ गयी है। (सहायक से) स्वागत गान पढ़ने के लिए अनाथ आश्रम की लड़कियों को बुलाओ।

सहायक : वो सर एकदम तैयार खड़ी हैं।

(पुनः नारे का स्वर। डायरेक्टर एक किनारे चला जाता है। जनसेवक का अन्य लोगों के साथ प्रवेश।

माला पहनाने वाले लोग माला पहनाते हैं। जनसेवक जी कुर्सी पर बैठ जाते हैं। खाली कुर्सियों पर कुछ और लोग भी बैठते हैं।)

एक : यह खुशी की बात है कि जनसेवक जी ने अपने अमूल्य समय में से थोड़ा सा मौका हमें दिया। हम सब इसके आभारी हैं, स्वागत करते हैं। अब एक गैर सरकारी सहायता प्राप्त स्कूल के लड़के-लड़कियाँ स्वागत गान गायेंगी। यह स्कूल विशेष रूप से इसलिये चुना गया है कि जनसेवक जी पर सरकारी तंत्र से तारीफ करवाने का आरोप न लगाया जा सके।

(स्वागत गान कोरस में। लोक धुन पर)।

पुरुष : चमचों के कष्ट निवारन को
स्त्रियाँ : जनसेवक जी आये हैं।
पुरुष : आये हैं भई आते हैं, जनसेवक जी आये हैं।
दोनों : चमचों के कष्ट निवारण को, जनसेवक जी आये हैं।
पुरुष : यह हैं बाबा के नाती
स्त्रियाँ : और चाचा के खैराती
पुरुष : लक्ष्मीपति के संघाती
स्त्रियाँ : ये जमीन्दार के थाती
पुरुष : अब फर्जी स्वर्ग उतारन को।
स्त्रियाँ : यह जनसेवक जी आये हैं।
दोनों : चमचों के कष्ट निवारण को……
पुरुष : वादों की लिए पिटारी
स्त्रियाँ : भाषण की नुस्खेदारी
पुरुष : हिंसा संग भांवर डारी
स्त्रियाँ : है भेष अहिंसा धारी
पुरुष : गोली से देश उजाड़न को

स्त्रियाँ : जनसेवक जी आये हैं

दोनों : चमचों के कष्ट निवारण को······

पुरुष : इनका सरूप है जाना

स्त्रियाँ : कुर्सी का रोग पुराना

पुरुष : चाचो जैसा है बाना

स्त्रियां : मेहनतकश से दुस्माना

पुरुष : फिर उल्टी धार बहावन को

स्त्रियाँ : जनसेवक जी आये हैं।

दोनों : चमचों के कष्ट निवारण को, जनसेवक जी आये हैं।
(तालियां)

एक : (खड़े होकर) अब जनसेवक जी हमें आशीर्वाद देंगे।

जनसेवक : (मुस्कराते हुए) बाइयों, बेनों, और दोस्तों, मैं अपनी बुराई अपने मूं पर सुनता ऊं। आप लोग जनतांत्रिक हो गये हैं। मैं कितना जनतांत्रिक हूँ, आपने मेरी बरदास्त का माद्दा देख लिया। खुशी जाहिर करता हूँ। गधे नहीं, नहीं गले में कुछ खरास है। थोड़ी देर पेले एक उद्घाटन में हुटिंग हो गयी थी। उसकी बजे पानी नहीं मिला। आप सब मेरा रेकार्डेड भाषण सुनें। (उंगली उठाकर बताते हुए) तर्जुमा ये मेरे दोस्त करेंगे। क्योंकि मुझे आपकी भाषा नहीं आती है।
(बीच में व्यवधान)

लोग : वोट तो हमारी ही भाषा में मांगते हो।

जनसेवक : (बिना कोई उत्तर दिये, मुस्कुरा कर बैठ जाते हैं।)

एक : मित्रो, शान्ति-शान्ति। घबराइये नहीं। मैं जनसेवक जी के भाषण की सन्दर्भ सहित व्याख्या करूंगा। जनसेवक जी के भाषण की हिन्दो भी जरा ऊंचो होती है। इसलिए उसका अनुवाद भी ऊंचा होना चाहिए।

(स्वगत) भाषण सेक्रेटरी ने तैयार किया है।

(रेकार्ड बजता है)

(डायरेक्टर बीच-बीच में इशारा करके तालियाँ बजवाता रहता है।)

जनसेवक : बंधुजन, बहनों और मित्रगण, एक लम्बे समय के बाद और एक विशिष्ट वातावरण में हम आपसे मिल रहे हैं।

एक : (अनुवाद में) लम्बे समय के माने यह लगा लीजिए कि जनसेवक जी के कुछ साथी तो कभी हुकूमत में आये ही नहीं और जो आये भी तो वह दूध की मक्खी की तरह निकाल कर फेंक दिए गए थे। विशिष्ट महौल यानी कुर्सी पर बैठना। अब वह आपसे कुर्सी पर बैठ कर बातें कर रहे हैं।

जनसेवक : मेरी तीव्र इच्छा थी कि मैं प्रत्यक्ष रूप में आपसे बातें करूँ।

एक : (स्वगत) पर क्या करें, भाषा ही नहीं आती। (प्रकट) यानी वह बात करना चाहते थे पर एक तो चुक गये हैं। बोलते ही रहे और बोलने के अलावा कुछ नहीं करते हैं। आखिर कहाँ तक बोलें। एक बात कब तक दोहराएँ। लिहाजा रिकार्ड करवा लिया है। आप सुनें। भाषा नहीं आती का मतलब यह है कि आपको हुकूमत की भाषा नहीं आती। समझने की अक्ल नहीं है। यह तो बड़ी कृपा हुई आप स्वयं आ गये। वरना ऐसी बातों को वे तार और संदेशों में कहा करते हैं। आप लोग शान्ति धारण करें। यहाँ के बड़े लोगों ने चुनाव में जो पैसा जनसेवक जी को दिया था, वे यहाँ पधार कर आज उनसे मुक्ति पा गये। उद्धार हो गये।

जनसेवक : बड़ी-बड़ी आकांक्षाएँ लेकर आप लोग हमारे पास आए हैं।

एक : (स्वगत) यही तो गलती हुई। (प्रकट) आप लोग दुःखी न हों। जनसेवक जी हिचकियाँ नहीं ले रहे हैं। जरा टेप में कुछ खराबी आ गयी है।…तो उनका कहना यह है कि आप लोग बड़ी-बड़ी उम्मीदें लेकर आये हैं। उन्होंने आपको जनतन्त्र वापस कर दिया है। बस। अब वे आपको कुछ नयी बुनियादी चीजें देने के मूड में नहीं हैं। पुलिस वे बदल नहीं पाये हैं। मुनाफाखोरों ने उन्हें चन्दा देने में कोई क़टौती नहीं की है। इस स्थिति में वे समझ नहीं पा रहे हैं कि किस डायलिसिस पर रख कर आपको जिन्दा रखें।

जनसेवक : मैं इतना ही कहता हूँ कि देश में जनतन्त्र कायम रखिए। तानाशाही की शक्तियों का प्रतिरोध कीजिए।

एक : मतलब यह कि सभी जुम्मेदारियाँ आपकी ही हैं, उनका काम घर के अखाड़े में अपने भाई-बन्दों को जोर कराना है। इसका क्षेपक मैं इस तरह कर रहा हूँ कि जिसके हाथ में बन्दूक है, उसे आराम से सो जाने को कहो और जो निहत्थे हैं उनसे मैदान में जाकर जूझ जाने को कहो। जनसेवक जी का यही संदेश है। सरकार जनता बनाती है। अतः भूखो जनता ही मरे। चोरी, डकैती से पीड़ित हो जनता। करों के बोझ से मरे जनता। जनसेवक जी का काम सिर्फ मंत्री बदलना, स्टेटमेन्ट देना, जाति बिरादरी को अच्छे ओहदे पर पहुँचाना और अन्त समय में आरक्षण की गंगा बहाकर अपनी सात पुश्तें तार ले जाना।

जनसेवक : मैं नहीं समझ पा रहा हूँ कि आप मेरी बातों को कहाँ तक समझ पा रहे हैं।

(डायरेक्टर जोर से ताली बजवाता है। थोड़ी देर तालियाँ बजती रहती है।

हमारी विदेश नीति सुदृढ़ है। सारे देशों से हमारे संबंध सुधरे हैं। प्रत्येक स्तर पर हमें आपका सहयोग चाहिए।

एक : सहयोग चाहिए यानी आप सब लोग पुरानी बातें भूल जाइए, जिन देशों को मेरे बन्धुओं ने गाली दी, वह भूल जाइए। अब हम किसी को गाली नहीं देते। उनसे संविधान के लिए प्रेम चाहते हैं। आपके लिए दवा चाहते हैं। माल के लिए बाजार चाहते हैं। वे एक विदेशी दल फौरन ही आपकी तकलीफों के अध्ययन के लिए बुला रहे हैं। खबर जरा बाद की है, इसलिए रिकार्ड नहीं हो पायी है।

जनसेवक : हमने देश का सौदा नहीं किया है।

एक : यानी पहाड़ी देवी की झोपड़ी पर कसम बड़े लड़के की, कोई अमेरीकी यंत्र नहीं रखवाया। उस मामले का एक पैसा भी इनके लिए गोमान्स है। गऊ की कसम क्यों खायी, आपको समझाने की जरूरत नहीं है। गऊ कभी इनकी राजनीति में शुभ मानी जाती थी।

जनसेवक : आपका अधिक समय नहीं लेना चाहता। आप हमें नये विश्वास के साथ आज्ञा दें।…जै हिन्द।

डायरेक्टर : रुको जै हिन्द क्या है ? तुम्हारा अपना तकिया कलाम होगा। यहाँ यह नहीं चलेगा, जब देखो जै हिन्द। थोड़ा नयापन लाओ। जय भारत कहो। देश से बाहर

जाने का रोल करना हो तो ज़य विश्व कहो। डायलाग फिर से दुहराओ।

जनसेवक : आपका अधिक समय नहीं लेना चाहता। नये विश्वास के साथ आज्ञा दीजिए—जय भारत।

डायरेक्टर : ठीक (एक को बोलने का इशारा करता है।)

एक : यानी अब कुर्सी पर बैठने के बाद समय कम हो गया है इनके पास। जब आप लोग इन्हें कुर्सी से उतारियेगा, तो हर रोज आपकी चौपाल में बैठक करेंगे। रही नये विश्वास की बात सो सिर्फ़ उनकी तरफ से। यानी उन्हें बने रहने का विश्वास चाहिए। भविष्य में सारे-के-सारे कर्तव्य आपके हैं। पाँच साल बाद इनके लिए वोट का ध्यान रखना। फिर उन्हें गद्दीनसीन करना। यह सब कुछ नये विश्वास में आता है।

(पास की कुर्सी पर बैठा हुआ पात्र घड़ी देखकर जनसेवक के कान के पास अपना मुंह ले जाकर बुदबुदाता है। जनसेवक एक के कान में बुदबुदाता है।)

एक : जनसेवक जी का वक्त करीब आ गया है। (लोगों की हँसी) हँसिए नहीं। मेरा मतलब, दूसरे प्रोग्राम में जा रहे हैं। लिहाजा मेरा सभी पात्रों से निवेदन है कि जनसेवक को वे विदा दें।

डायरेक्टर : सभी नहीं भाई। सिर्फ कुछ लोग उन्हें विदा करने जायेंगे। बाकी लोग बैठे रहेंगे। परदा भी तो गिरवाना है।

(जनसेवक जी चले जाते हैं। डायरेक्टर इशारे से परदा गिराने को कहता है।)

परदा गिरता है।

दृश्य चार

: विश्राम :

(डायरेक्टर मंच पर टहल रहा है। सहायक मुलायम सिंह का प्रवेश। दोनों सहायक जनसेवक के कमरे का सेट लगा रहे हैं।)

डायरेक्टर : (सहायक से) पत्रकार सम्मेलन वाला सेट तैयार है ?

मुलायम सिंह : हाँ, जी एक शंका है मुझे।

डायरेक्टर : क्या ?

मुलायम सिंह : मद्य निषेध के दौर में दारू मंच पर कैसे आयेगी और बिना दारू के पत्रकार कैसे आयेंगे ? और बिना पत्रकारों के सम्मेलन कैसे होगा ?

डायरेक्टर : ऊँ हूँ इसे जरा शार्ट कट में भी कहा जा सकता था। विदेशी पत्रकार भी तो आयेंगे। अभी इतना जल्दी हम अपनी अतिथि सत्कार वाली आदत पर पत्थर थोड़े ही डाल देंगे। गो ब्राह्मण और अतिथि के सामने हम हमेशा भेंड़ बने हैं।…मरजी हो तो मोहम्मद गोरी बनकर हमें गिरफ्तार कर ले या विश्वामित्र बनकर हमें देश निकाला कर दें या मेहमान बनकर हमारे घर

में भूजी भाँग भी न रखें…तो फैसला यह कि शराब जरूर चलेगी ।

मुलायम सिंह : लेकिन सर, जनसेवक जी तो सात्त्विक हैं ।

डायरेक्टर : यह किसी का व्यक्तिगत मामला हो सकता है, नाटक से इसका क्या मतलब ? यहाँ जो कुछ मंच के लिए जरूरी है सब करना पड़ेगा ।

मुलायम सिंह : तो सर ।

डायरेक्टर : सहायक मुलायम सिंह, जनसेवक का मेकप जरा ठीक से करा देना । अपने आप को धन्य करना । बुढ़ापे की झुर्रियों का ध्यान रखना । हमें दिखाना यह है कि बुड्ढा होकर भी जवानों के कान काटता है । कपड़े दरबारी ही रहेंगे—यानी सफेद बुर्राक खद्दर ।

मुलायम सिंह : और सर ?

डायरेक्टर : बाकी फिर देखेंगे । परदा खुलवाओ ।

(परदा खुलता है । जनसेवक जी बैठे किसी कामुक पत्रिका को देख रहे हैं । पत्रिका विषय वस्तु के लिहाज से गन्दी है । उसके आवरण पृष्ठ का अर्ध नग्न चित्र ही यह बता देता है । मटकती हुई सेक्रेटरी का प्रवेश । जनसेवक उसके दोनों हाथ की उगलियां पकड़ कर उसकी आँखों में आँखें डाल देता है । थोड़ी देर घूरता रहता है । उसे अपनी ओर खींच कर आगोश में करना ही चाहता है कि वह उनके हाथ में काट कर हँसने लगती है । चपरासी का प्रवेश…।

चपरासी : सर, यह बाद में कर लीजिएगा । फिलहाल पत्रकार लोग आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं ।

जनसेवक : (बिल्कुल साधारण भाव से जैसे चपरासो का उन्हें इस स्थिति में देखना कोई अप्रत्याशित न हो—सेक्रेटरी

की ओर देख कर) इस काम को फिर कर लेंगे। अभी पत्रकार लोग मेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं। ···बुलाओ उन्हें···। नहीं रुको हम खुद चल रहे हैं उनके पास। जरा अपना दाढ़ी बनाने वाला डिब्बा तो ले चलो।

चपरासी : साहेब कानफरेन्स माँ दाढ़ी का डिब्बा का होई।

जनसेवक : गधे हो। कल अखबारों में छपेगा कि जनसेवक जी का व्यस्त जीवन : दाढ़ी बनाते हुए पत्रकार सम्मेलन सम्पन्न।

चपरासी : हाँ साहेब विना अकबार की तारीफ के आजु तले कोउ की गाड़ी चलत नाही हियाँ।

जनसेवक : (मुस्कराकर) सब जानता है।

चपरासी : (खुश होकर) टेलीफोन के तीनों चोंगा वहीं रखिदेई साहेब।

जनसेवक : क्यों ?

चपरासी : अरे साहेब, ई मेम साहेब (सेक्रेटरी की तरफ देखकर) सब विभागन के वारे मा हरा भरा देखावत रइहैं। आप मुलुक का अपनी जुवान से खुशहाल बनावत रहेउ। कालि अखबारन मा छपी कि देश मा आजादी के बाद पहिली दफा सुख आवा।

जनसेवक : (चपरासी की पीठ ठोंकते हुए) बहुत ठीक।

(जनसेवक, सेक्रेटरी और चपरासी का प्रस्थान। पुनः मंच पर प्रवेश। पत्रकार लोग बैठे सिग्रेट फूंक रहे हैं। जनसेवक को आता देखकर, सभी उठकर खड़े हो जाते हैं। जनसेवक हाथ जोड़ कर सबका अभिवादन करते हुए बैठ जाता है। मेज पर चपरासी दाढ़ी बनाने का सामान रख देता है और चला जाता है। शराब के दौर शुरू हो जाते हैं।)

पत्रकार एक : (प्याले में ढालते हुए) जनसेवक जी दाढ़ी बनाने का मौका नहीं मिला, अभी तक आपको।

जनसेवक : (हाथ से उस स्थान को सहलाते हुए जहाँ पर सेक्रेटरी के दाँत लगे थे तथा सेक्रेटरी की ओर देखकर) दर-असल मैं देश के अमनचैन की महत्त्वपूर्ण योजना के संबंध में गुफ्तगू करता हुआ मशगूल रहा। मौका न मिलने का यही कारण रहा। वैसे यह आये दिन का दौर है। सियासत में चैन कहाँ, आराम कहाँ ? दाढ़ी क्या मुल्क की खुशहाली से बड़ी है ? मेरा जीवन ही अगर देश के काम आ जाये तो अच्छी बात है।

चपरासी : (स्वगत) काहे नाही हमते कोउ पूछे, इनकी जिन्नगी काहें मा जाय रही है।

जनसेवक : (गुस्से से चपरासी की ओर देखकर) क्या बुदबुदा रहा है ? चल यहाँ से।

चपरासी : (सिमट कर एक ओर हो जाता है।)
(थोड़ी देर की शान्ति के बाद)

पत्रकार दो : सर आपके व्यक्तिगत जीवन के बारे में लोग प्रश्न चिह्न लगा रहे हैं, आपके पुत्रों को भ्रष्टाचार के मुँह में झोंक रहे हैं—क्या विचार है आपका ?

जनसेवक : देखिए मैं कोई फिल्मी अभिनेता नहीं हूँ। मैं जनता का नेता हूँ। लिहाजा पहला सवाल बेकार है। और अगर हो भी तो अपने दिमाग में यह बैठा लीजिए कि हुकूमत साधू बनकर नहीं होती। और रहे राजकुमार, वे राजकुमार हैं—राजा नहीं। उन पर सवाल उठाना राजद्रोह है। फिर बताइए मेरे परिवार ने जनता की सेवा में सदैव ही अपना सब कुछ अर्पन किया है (गुस्से

से) फिर भी आन्दोलन और हड़तालें—हम इसे बरदास्त नहीं कर सकते ।

पत्रकार दो : सो तो है सर, भला यह कैसे हो सकता है कि आपकी बराबरी का कोई दूसरा क्रान्तिकारी बन जाये । यही कारण है, मैं आपके क्रान्तिकारी जोवन और कार्यों पर एक पुस्तक लिखना चाहता हूँ—सहमति है आपकी ?

जनसेवक : मुझे गद्दी से उतरते ही मेरी छीछालेदर पर किताब लिखोगे । यदि रंग बदलने में गिरगिट के बाद किसी को नोबुल पुरस्कार मिल सकता है तो सिर्फ पत्रकार को (हँसी) ।

पत्रकार दो : खैर सर, जाने दीजिए हम बुद्धिजीवियों को थाली का बैंगन समझिए । हमारी जुबान चटुही शरीर नाजुक और दिल बड़ा कमजोर होता है । वैसे अगर देश के लिए कोई महत्त्वपूर्ण योजना आपके मस्तिष्क में हो तो बताइए ?

जनसेवक : मेरा समयबद्ध कार्यक्रम है । नशाबन्दी चार साल में (सभी पत्रकार चियर्स कहते हैं) गरीबी दस साल में दूर (सभी बकप कहते हैं) दल का संकट ६ माह में, और मूल्य स्थिरता अगली फसल में ।

पत्रकार तीन : आपके उत्तराधिकारियों में कोई चीज अच्छी लगी आपको सर ?

जनसेवक : हाँ चुनाव घोषणा पत्र को कागजी बना देने की कला। वादा खिलाफी पर अमल ।

पत्रकार तीन : और मंत्रिपरिषद् का घटाव-बढ़ाव, मंत्रियों का आयात-निर्यात सर ?

जनसेवक : तो आप चाहते हैं मैं एकदम बागी हो जाऊँ । मेरे में

खानदानी खून का असर न रह जाये। मेरे कमरे में लिखा गया है—

वह व्यर्थ ही जनमा जगाया जाति को जिसने नहीं।
जातीय जीवन की झलक आई कभी जिसमें नहीं।।

पत्रकार एक : जगाया जाति को नहीं सर, जगाया देश को होना चाहिए।

जनसेवक : दर्शन मुझे आपसे नहीं पढ़ना है। जाति के पेट में ही देश होता।

पत्रकार एक : तब सर जाति के माने आप क्या लगाते हैं ?

जनसेवक : जाति माने पिछड़ी जाति—हम और हमारे मंत्री, मंत्री और—

पत्रकार दो : सन्त्री, यही न सर ?

जनसेवक : बिल्कुल ठीक।

पत्रकार तीन : अच्छा सर, मैं समझता हूँ इस समय देश में सिर्फ दो राजनैतिक दल हैं—एक वे जो तानाशाही का समर्थन करते हैं—और दूसरे वे जो इसका विरोध करते हैं।

जनसेवक : मैं जनतंत्र पसंद करता हूँ।

पत्रकार तीन : यही वजह है आपने पीछे दरवाजे से मिनी मीसा लगवाया है, हड़तालों को अवैधानिक घोषित कराया है। और इस तरह तमाम जगहों पर गोली चलवाकर जलियाँ वाले बाग के स्मारक कायम किये हैं।

जनसेवक : (झल्लाकर) बेहूदगी की भी कोई हद होती है। व्यंग्य करने का भी कोई तरीका होता है ?

पत्रकार दो : वी आर सारी सर मेरी समझ में जातिवाद, पक्षपात, भाई भतीजावाद, भ्रष्टाचार जिसके खिलाफ आपने चुनाव जीता था। आज तानाशाही की तरफ

जाने का यही कारण हो सकता है कि आप इस पर काबू नहीं पा रहे हैं।

जनसेवक : कानून और व्यवस्था क्या बिगड़ रही है, लोग बदमाशी कर रहे हैं। मजदूर मालिक को उत्पादन नहीं करने देता। सरकार देखा करे, गोली न चलवाये ? बापदादों की जमीन को हुड़दंगे हथिया लें, सरकार देखा करे ? इन बड़े और भले आदमियों की जान न बचाये ? आपको ही अगर वहाँ जाना पड़े तो पूरे गाँव भर में पानी को यही बेचारे पूछते हैं। हालात का बिल्कुल ज्ञान नहीं है आप लोगों को। पत्रकार बन गये हैं—बड़ी देश की चिन्ता है आपको। किसी जमाने में आपका काम भी दरबारगीरी करना था। नाचने-गाने, रासलीला और मेला बाजार पर कालम भरते थे। एक काफी, दो मिनट उनके पसीनें की गंध लेने के लिए आपकी कलम दुम हिलाया करती थी—मुझे सब मालूम है।

पत्रकार चार : विदेश नीति में कोई परिवर्तन आया है, आपकी समझ में ?

जनसेवक : क्यों नहीं, संयुक्त राष्ट्रसंघ में हिन्दी में भाषण जो हुआ है।

पत्रकार चार : आपको कैसे महसूस हो रहा है कि देश में जनतंत्र की पुनः स्थापना हो गयी है।

जनसेवक : पूरी ताकत के साथ बैठे हैं हम, और चुनाव हार रहे हैं। चाहते तो बेईमानी कर लेते।

पत्रकार पाँच : आपके यहाँ कोई विरोधी नहीं है।

जनसेवक : गाँधी जी के शब्दों में सब सहयोगी हैं। वैसे पूरे देश

के स्तर पर कोई नहीं। गोरिल्ला विरोधी आप कहले (हँसी)।

पत्रकार पाँच : यह तो पुराने ढंग की बात हुई।

जनसेवक : तो आपने सवाल ही कौन-सा नये ढंग से पूछा है।

पत्रकार पाँच : संविधान के बारे में आपका क्या विचार है ?

जनसेवक : इसे तो बस झाड़े-पोंछे रहने की जरूरत है।

पत्रकार एक : प्रशासनिक मितव्यता के क्षेत्र में आपकी सरकार क्या कुछ कर रही है ?

जनसेवक : क्यों नहीं, साल में दो बार बैलगाड़ी से चलते हैं, चार बार हवाई जहाज से, सात बार ट्रेन से। और हाँ··· आपने पिछली दफे सायकिल पर दफ्तर जाते हुए मेरी फोटो नहीं देखी थी ? काम ही कम कर रहे हैं ? न कागज की जरूरत न कार्यकर्ताओं की और···

पत्रकार एक : न काम की। (हँसी)

जनसेवक : और जाने क्या-क्या जोड़ लें आप लोग अपनी तरफ से, रोटी ही इसी की खाते हैं। (हँसी)

पत्रकार दो : अच्छा सर यह बताइए···

डायरेक्टर : (बीच में ही टोकते हुए) तुम ज्यादा सवाल मत पूछो। तुमने संकट काल में उसकी मुखालिफत की थी। जानते हो हर सवाल का वह एक ही जवाब दे देगा कि तुम संकट काल के वक्त के समर्थक थे। (थोड़ा रुक कर) कोई और पूछें।

पत्रकार दो : (सर झुका कर पैग खाली कर देता है)।

पत्रकार चार : राज्य और केन्द्र सम्बन्धों पर आपके क्या विचार हैं।

जनसेवक : कश्मीर से कन्याकुमारी और कच्छ से कोहिमा तक मुझे अपनी ही कुर्सी की टाँग दिखायी देनी चाहिए।

पत्रकार चार : यह तो एकाधिकारवादी मार्ग है।

जनसेवक : इसका फैसला अखबार नहीं राजगद्दियाँ करती हैं।

पत्रकार तीन : अच्छा सर एक बड़ा महत्वपूर्ण प्रश्न पूछ रहा हूँ।

जनसेवक : (शराब को प्याले में ढालते हुए अदा के साथ) फरमाइए ?

पत्रकार तीन : इस वक्त फौरी तौर से आर्थिक मुद्दे पर आप कुछ करने जा रहे हैं ?

जनसेवक : बैठकें जारी हैं, इस संबंध में (लोगों की हँसी)। (गम्भीर होकर) शब्दावली से कौमनिस्ट मालूम होते हो। पर मुझे मालूम है कि इन्तजार का फल मीठा होता है। पंत जी ने कहा है।

"विरह प्रेम की जाग्रति गति है
और सुसुप्त मिलन है
मिलन अन्त है मधुर प्रेम का
और विरह जीवन है।"

(वे अपनी सेक्रेटरी को कनखियों से देख लेते हैं। वह गद्गद होकर सर झुका लेती है। पत्रकार लोग एक दूसरे को देखकर मुस्कराते हैं। गम्भीर होकर)—सीमाओं पर खतरा है देश के कुछ दल अराजकता फैला रहे हैं। फिर भी हमारी सरकार इनसे कड़ाई के साथ निबटेगी।

डायरेक्टर : बोरिंग डायलाग, पता नहीं घिसा पिटा कब का डायलाग बोले जा रहा है। इस जगह का मार्के का डायलाग भूल गया।

(दर्शकों में से आवाज—मारो सालों को—मारो—मारो—भागने न पायें ये लोग। दर्शकों में से ही उठकर मंच की ओर दौड़ते हैं किसी के हाथ में हँसिया और बाली है, तो किसी के हाथ में हथौड़ा और

सड़ासी है, तो कोई कन्धे पर लाठी रखे है और कोई खाली हाथ ही है। कुछ छोटे दुकानदार जैसे लोग भी हैं जो हाथ में किलो आधा किलो के बाँट लिये हैं। सभी इन्कलाब जिन्दाबाद, शोषित एकता जिन्दाबाद के नारे लगाते हैं। मारो-मारो की आवाज बराबर सुनायी पड़ती है। जनसेवक भौंचक्का है। कुछ पत्रकार भी भौंचक्के हैं। एक आध मुस्करा रहे।)

जनसेवक : (सेक्रेटरी से घबराकर) गिरफ्तार करा लो इन्हें। (नारे लगाने और गाली बकने वाले मंच पर ही आ जाते हैं)

सामूहिक स्वर : पुलिस बुलायेगा। मारो सालों को—इन्कलाब जिन्दाबाद। (सभी पिटते हैं। जनसेवक का चश्मा टोपी मंच पर ही गिर जाता है। डायरेक्टर का पैन्ट छूट जाता है। किसी की डायरी छूटती है तो किसी की कलम। सभी पिट-पिट कर भागते हैं।)

सामूहिक स्वर का नेता : (हाँफते हुए) साले नाटक करते हैं यहाँ। मजा ले रहे हैं—चोर कहीं के।…चलो भाइयों।

परदा गिरता है।

पखहीन प्यास

'रघुराज दीक्षित

पात्र-परिचय

स्त्री पात्र

—माँ
—पत्नी

पुरुष पात्र

—मुखिया
—सूटेड बूटेड
—ध्रुवनारायण
—मज़दूर नेता १
—मज़दूर नेता २
—मिल मालिक
—नेता
—मुंशी
—बड़े बाबू

—अन्य चार-पांच पात्र विभिन्न भूमिकाओं के लिये ।

परिधिहीन व्यास

[कमरा। कमरे से मिली रसोई। रसोई में व्यस्त माँ।]

(धीरे-धीरे प्रकाश फैलता है।)

माँ : तू उठा नहीं, बेटा।

पात्र : (निकट जाकर) कब का बैठा पढ़ रहा हूँ माँ।

माँ : वही कहा मेरा बेटा तो…।

पात्र : सूरज को अपने से पहले उठते नहीं देखा।

माँ : (गले से लगाकर उसे सहलाते हुए) जियो, बेटा, इस परिवार को बड़ी आशाएँ हैं तुमसे।

पात्र : माँ अँधेरा तो किसी को भी नहीं भाता। फिर…

माँ : फिर क्या बेटा ?

पात्र : यही कि लाचारी चाहे शारीरिक हो या मानसिक, हमें तर्कहीनता की ओर ही ले जाती है, आत्म विश्वास से काफी दूर हटा देती है। सच कहें, तो दिशाहीन कर देती है।

माँ : (कुछ खाने को देती हुई) इतना सब मुझे नहीं आता। पर तू इतना मत सोचा कर बेटा।

पात्र : क्यों माँ ? अँधेरे में हाथ मारने से कुछ होगा क्या ?

माँ : बेटा, अभी बीस बरस की उमर में तुझे अँधेरे और उजाले का अनुभव ही कहाँ हुआ है। अभी से अगर सोचने लगा तो…।

पात्र : हार जाऊँगा—यही ना। नहीं माँ, नहीं। मैं हार नहीं सकता। मैंने गरीबी और लाचारी में भी पढ़ाई का लक्ष्य पूरा किया है। बापूजी की लम्बी बीमारी से उनकी मृत्यु तक किसी तरह घर चलाया है, लेनदेन चुकाया है, बहन के हाथ पीले किये हैं लेकिन··· (लम्बी साँस खींचकर) लेकिन मैं हारा नहीं माँ।

माँ : (उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए) पर लगता है, अब तू हार रहा है।

पात्र : (चौंक कर) नहीं-नहीं माँ अ-अ-अब भी नहीं हारा हूँ। बिल्कुल नहीं। म-मैं हार नहीं सकता। कभी··· कभी नहीं हार सकता। (आवेश से) हारना मैंने सीखा ही नहीं।

माँ : (व्यंग्य से) मेरी कोख मुझसे नहीं छुप सकती बेटा। क्या हुआ बताओ तो सही।

पात्र : तुम···तुम क्या समझोगी माँ ? संस्कारों की बेड़ियों में जकड़ी नारी समझ ही नहीं सकती कि कैसे इस देश के दुर्भाग्य ने श्रम विभाजन के नाम पर दो दुनिया बना दीं। दो सुख बना दिये, दो दुख बना दिये। एक पुरुष का, एक नारी का। एक उनका, एक मेरा। एक घर का, एक बाहर का। (उँगली उठाकर) दो, दो। सिर्फ "दो" माँ।

माँ : (चिन्तित सी) तुझे क्या हो गया है आज ? सुबह-सुबह ही इतना उलझ गया है। सोया भी नहीं रात।

पात्र : नहीं सोया। बिल्कुल नहीं सोया। आज ही क्या, मैं कई रातों से नहीं सो पा रहा हूँ। माँ। सोने नहीं दिया जाता। अब मैं सिर्फ़ एक ही शर्त पर सो सकता हूँ—

कभी न जगने के लिए सो सकता हूँ।...एक और सिर्फ "एक" शर्त पर।

माँ : (विस्मित किन्तु कुछ क्रोधित मुद्रा में) किस शर्त पर ? कौन नहीं सोने देता तुझे ?

पात्र : (विग की ओर हाथ उठाकर) वो।...वो।... वो।।।

[पर्दे के पीछे नेता, पुलिस, बलात्कार करते गुण्डे, भिखारी दिखाई देते हैं। पात्र के अन्तिम शब्दों के साथ मंच पर अँधेरा छा जाता है।]

: गाँव की चौपाल :

[धीरे-धीरे प्रकाश फैलता है। फिर बिग की ओर से मुड़कर वह धीरे-धीरे दर्शकों की ओर मुखातिब होता है। कुछ देर दर्शकों को देखता रहता है। एकाएक जोर से हँसता है, कुछ देर पागलों की तरह हँसता ही रहता है। सहसा शान्त हो जाता है और एक चादर ओढ़ते हुए चौपाल के चबूतरे पर खड़ा हो जाता है।]

एक : हमारी खड़ी फसल जबर्दस्ती काट ली गई।

दो : हमारी जवान लड़की को सोहदे उठा ले गये।

तीन : [औरत] मेरे साथ-मेरे साथ···(सर नीचा कर लेती है।)

चार : बलात्कार किया है। (तीन की ओर इशारा करके) और हमें चार दिन की मजदूरी नहीं दिया। (एक दिशा में हाथ उठाकर) उन्होंने।

पाँच : ब्याज के नाम पर वे लोग माल-असबाब और सब गहने भी उठा ले गये।

[बारी-बारी से पात्र उनकी बातें सुनता और सबकी ओर मुड़कर देखता है। साथ ही क्रोध की व कुछ ऐसी भी मुद्राएँ

बनाता है जैसे उसे असहनीय दुख हो रहा हो]

पात्र : (कमर पर हाथ रखकर) तो यह बात है। मैंने जब से समाज सेवा का भार संभाला है—ये हरकतें कम हो गयी थीं। फिर सर उठाने लगे लोग।

एक : कोई माई बाप नहीं है।

दो : कोई अब इन्साफ नहीं है।

तीन : कहीं कोई भगवान् नहीं है।

चार : कुछ नहीं है।

पाँच : कुछ नहीं है। कुछ नहीं है।

सब : कुछ नहीं है—कुछ नहीं है—कुछ नहीं है।

[लठैतों का प्रवेश]

सम्वेत स्वरों में : हूँ, है क्यों नहीं? तुम्हारा यह (मुखिया सामने आकर) बाप तो है। (सभी आगे बढ़ते हैं)

पात्र : (जोर से) रुक जाओ। इन मजलूमों पर अत्याचार क्यों कर रहे हो ?

मुखिया : हमें मजा आता है।

पात्र : गरीबों का खून अपने मजे के लिए बहाते हो।

मुखिया : (व्यंग्य से) नहीं तो…। तुम्हारी तरह से उपकार करने की कंठी बाँध रखी है।

पात्र : ये असहाय और गरीब लोग हैं।

मुखिया : और तुम, हरिश्चन्द्र की औलाद। दानदाता की दुम हो ?

[सभी लठैत हँसते हैं]

पात्र : (आवेश में आकर) मैं यह अन्याय नहीं देख सकता। मेरे जीते जो तुम इनकी जिन्दगी के साथ खिलवाड़ नहीं कर सकते।

मुखिया : तो अपनी आँखें फोड़ लो। (सभी हँसते हैं।)

पात्र : (पुनः आवेश में) गाँव की इज्जत का सवाल है। फूटी आँखों को भी रोशनी की जरूरत है।

मुखिया : अच्छा, तो गाँव सुधारने का ठेका लिया है साले ने। इसके बाप की जागीर है··· (दाँत पीसते हुए) नाक में दम किये है हरामजादा।···चैन की नींद नहीं लेने देता—उल्लू का पट्ठा। कीमा बना दूंगा।···छठी का दूध याद आ जायेगा हरामी की औलाद को।··· मीटिंग बुला रखी है—चूतिये ने। मारो···मारो सालों को····(सभी टूट पड़ते हैं उस पर)

पात्र : (उन सबके आगे आकर) मुझे अपनी जान की परवाह नहीं है। तुम इन पर हाथ नहीं उठा सकते। एक तो गाँव की मान-मर्यादा और इज्जत से खिलवाड़ करते हो, आदमी को आदमी को तरह जीना हराम करते हो और उस पर भी मारने की धमकी देते हो।··· खबरदार जो कोई आगे बढ़ा।···यह गाँव वसूलों पर चलेगा, इन्सानियत और भाई बन्दी पर चलेगा।

[सम्वेत स्वरों में] : उपदेश देता है, हरामी का पिल्ला। मारो सालों को।

[प्रहार करते हैं। अचेत होकर गिर कर पात्र लम्बी साँसें लेकर चुप पड़ जाता है। सारे प्रार्थी सहमे से एक दूसरे पर लदे खड़े हैं। मंच पर अंधेरा। फिर प्रकाश के साथ ही पात्र चादर फेंककर खड़ा हो जाता है। उन प्रार्थियों को देखता है जो मगर की तरह एक दूसरे पर लदे खड़े हैं।]

पात्र : (दर्शकों की ओर देखकर व्यंग्य से) गांव वसूलों पर चलेगा, इन्सानियत और भाई बन्दी पर चलेगा। कौन चलायेगा इसे ? (इंगित करके) जो मर गया है—वह …मगर की तरह एक दूसरे पर लदे हुए…ये—। (उनकी ओर देखकर) पुनः पागलों जैसी हँसी।…

[साधारण-सा आफिस। कुर्सियाँ अगल-बगल और बीच में। पात्र बीच की कुर्सी पर बैठा फाइलें पलट रहा है]

सूटेड-बूटेड : कैसे हैं इंसपेक्टर साहब ?

पात्र : (मुड़कर जल्दी से जेब में रखी टोपी निकालकर पहनते हुए उठकर बगल की कुर्सी पर बैठ जाता है) ठीक हूँ सर।

सूटेड-बूटेड : (उसकी कुर्सी पर बैठते हुए) तुम मुझे रिसीव करने नहीं आये ? कोई हवलदार या कांस्टेबिल भी नहीं भेज सकते थे ?

पात्र : सर, मैं काफी उलझा हुआ था एक केस में। मुझे अपने काम के बाहर कुछ भी दिखायी नहीं पड़ा।

सूटेड-बूटेड : लम्बी रकम है ? मर्डर केस है क्या ?

पात्र : (सहमता हुआ सा) जी सर,⋯मर्डर केस ही। पर रकम⋯। (बदले स्वर में) रिश्वत को मैं अपने और अपने देश के लिए कोढ़ समझता हूँ। और भ्रष्टाचार को समाज का विनाश। मैं जानता हूँ, जिस आदमी को इसमें फँसाया जा रहा है—वह बेगुनाह है। (उत्सुकता से) सर, मैंने असली कातिल का भी पता लगा लिया है।

सूटेड-बूटेड : (हाथ उठाकर रोकते हुए) बस, बस, बस (अफसरी

रोब से) मुझे पता है किसे तुम फँसाना चाहते हो। इसीलिए मैं यहाँ आया हूँ। मालूम है तुम्हें, उनका खानदान कितना ऊँचा है। एक्सबेस्डर से लेकर मेरी रैंक तक कितने लोग हैं उनमें—उनके घर और खानदान में।···आदमी पहचानने को तमीज नहीं है।

पात्र : सर, यह हो सकता है। पर कानून को अपराधी तो पहचानना ही चाहिए।

सूटेड-बूटेड : इन्सपेक्टर, तुम अभी बच्चे हो। जो मारा गया है और जो उसके मर्डर में मुलजिम बनाया जा रहा है —दोनों की अहमियत में फर्क है।···नेग्लीजेबुल। कानून के पास इतना वक्त नहीं है कि इन कीड़े-मकोड़ों पर उसे जाया करें।

पात्र : तब सर, कानून की जरूरत ही क्या है?

सूटेड-बूटेड : (मुस्कराकर) भई, कानून बना इसीलिए है। सोचो प्रोपर्टी न होती तो नब्बे फीसदी झगड़े न होते। प्रोपर्टी ने ही कानून को जन्म दिया है। इसलिए कानून का पहला फर्ज है उसकी हिफाजत कराना।

पात्र : तब तो आज तक जो देश का भूगोल, संस्कृति, जाति, धर्म, लोग हम पढ़ते आये हैं—वह सब झूठा था। देश सिर्फ वही है जिसमें आप द्वारा बताये गये लोग रहते हैं।

सूटेड-बूटेड : इंसपेक्टर। तुम समझने की कोशिश क्यों नहीं करते? कानून चाहता है गवाह।···गवाह, पैसा, पैरवी—कर सकते हैं। वह, जिनकी तुम वकालत करना चाहते हो। कानून उसकी मर्जी से चलेगा, हम, तुम नौकरी भी उन्हीं की मर्जी से करेंगे। (रुककर) ध्रुव नारायण जैसे लोगों से दुश्मनी मोल लेना अच्छी बात नहीं है।

पात्र : कुछ भी हो सर, मैं अपने कर्त्तव्य और निष्ठा के लिए किसी भी खतरे को उठाने के लिए तैयार हूँ। कोई भी त्याग करने को राजी हूँ। किसी भी तरह मैं अन्याय का पक्षधर नहीं बन सकता।

सूटेड-बूटेड : मैं कैसे समझाऊँ इंसपेक्टर कि···।

ध्रुवनारायण : (प्रवेश करते हुए) कि ध्रुवनारायण से बैर महँगा पड़ता है, अच्छा नहीं है।

सूटेड-बूटेड : (हड़बड़ाकर उठते हुए) जी आइए, आइए, ध्रुव-नारायण जी मैं···मैं यही समझा रहा था।

ध्रुवनारायण : (अनसुना-सा करके खाली कुर्सी पर बैठते हुए इंसपेक्टर की ओर मुड़कर) इंसपेक्टर साहब।

पात्र : (साधारण स्थिति से ही) जी।

ध्रुवनारायण : इलाके के गणमान्य लोगों की सूची में···

पात्र : जी, आपका नाम नहीं है।

ध्रुवनारायण : इंसपेक्टर साहब, जनता के आदमी से बात करना आप जरूर जानते होंगे?

पात्र : जी जानता हूँ, आप विश्वास करें।

ध्रुवनारायण : जैसे मुझसे?

पात्र : आप जनता के आदमी की तरह नहीं—कानून पर दावेदार की हैसियत से बात कर रहे हैं।

ध्रुवनारायण : मतलब?

पात्र : मतलब यह कि कानून में उस आदमी का भी हिस्सा है जो मारा गया है और उसका भी हिस्सा है जो बेगुनाह फँसाया जा रहा है।

ध्रुवनारायण : मेरा कानून से कोई वास्ता नहीं है।

पात्र : है—भालू और मदारी जैसा, शतरंज और खिलाड़ी जैसा, बेवकूफ और समझदार जैसा।

ध्रुवनारायण : आप मुझे अपराधी समझते हैं ?

पात्र : मेरी छानबीन सही है तो इस जघन्य अपराध में आपका पूरा-पूरा हाथ है ।

ध्रुवनारायण : इंसपेक्टर सीमाएँ न लाँघिए ।

पात्र : (व्यंग्य से) अपराधी कानून की सीमाएँ निश्चित करेगा ?

ध्रुवनारायण : शटप्...।

पात्र : होल्ड योर टँग । आई अरेस्ट यू फार दी कांसपीरेसी आफ दी मर्डर ।

[पात्र उठने को है तभी दो लोग आकर पात्र के सामने खड़े हो जाते हैं ।]

एक : मिस्टर इंसपेक्टर यू आर अन्डर अरेस्ट ।

दूसरा : यह रहा आपका वारन्ट ।

पात्र : (कागज देखकर) रिश्वत लेने के आरोप में । कैसे.... कहाँ...कब ?

एक : ये नोट मेरे हस्ताक्षर के हैं । आपकी तकिया के नीचे मिले हैं ।...ध्रुवनारायण जी को बहुत-बहुत धन्यवाद जिन्होने कानून की मदद की ।

पात्र : (अवाक्-सा सबकी ओर देखकर टोपी उतारकर जेब में रखता है मंच पर थोड़ा आगे बढ़कर) अपराधी कानून की मदद कर रहे हैं । राम-राज्य आ गया है । (दर्शकों से) देखिये राम-राज्य आ गया है । घोड़ा घास से दोस्ती कर रहा है । शेर बकरी से प्यार कर रहा है । (पागलों सा हँसता है ।)

[स्थिर मंच पर अँधेरा]

[हल्का प्रकाश फैलता है। स्कूल का साइनबोर्ड। पात्र खड़ा उसे देख रहा है। विग से किताबें उठाकर पुनः साइनबोर्ड की ओर देखता है।]

पात्र : (स्वगत) यही वह स्कूल है जहां मैंने न्याय और नैतिकता पर चलते रहने का प्रण किया था।

गांधी जी की मूर्ति के सामने असत्य त्यागा था···
सुभाष के सामने देश भक्ति की कसम जपी थी···
भगतसिंह के सामने प्राणोत्सर्ग का वादा किया था···
माँ, बाप, भाई, पत्नी, बच्चे सबके प्रति वफादारी का व्रत लिया था···
यहीं अपने को एकलव्य मानकर गुरुदक्षिणा में सर्वस्व अर्पण करने का दम भरा था···
मेरे मूल्य थे······
मेरी आकांक्षायें थीं···
मेरा मार्ग था···
पर आज···(शून्य में देखने लगता है)

[बेफिक्री से आते हुए छात्र। आधुनिक छात्र। एकाएक पात्र को साइनबोर्ड की ओर देखते हुए पहले मुंह पर फाइलें लगाकर हंसते हैं फिर प्रकट रूप में···।]

छात्र एक : भोंदू मियाँ हिज्जे लगा रहे हो ?

छात्र दो : डा० खुराना की तरह कुछ पैदा कर रहा है।

छात्र तीन : नहीं आर्कमेडीज की तरह कहने ही वाला है—कुछ पा गया।

छात्र चार : मार यार, साला फिल्मी मोहब्बत का रिहर्सल कर रहा है।

छात्र एक : तब भोंदू हो, लगता है पढ़ने आये हैं मियाँ।

छात्र दो : (पात्र को सम्बोधित करके) अबे वो। पढ़-लिख कर भी रोड-इंसपेक्टरी करेगा।

छात्र तीन : मौज करो मौज।

छात्र चार : अबे उल्लू किसी लड़की से मोहब्बत ही कर ले।

छात्र एक : छोड़ यार मोहब्बत-वहब्बत, किताबें रट भी लेगा तो सोर्स कहाँ से लायेगा ?

छात्र दो : होगा काका, फूफा, भतीजा किसी कुर्सी पर।

छात्र तीन : हट साले, इसका रिश्तेदार कुर्सी पर होता तो किताबें पढ़ता साला ?

छात्र चार : नया है नया, चार दिन बाद आटा दाल का भाव मालूम हो जायेगा।

छात्र एक : (व्यंग्य से) नहीं भई, कम्पटीशन कोम्पीट करेगा।

छात्र दो : क्यों नहीं, सूरत तो डेढ़ सौ रुपये का फार्म भरने वाली दिखायी नहीं देती ?

छात्र तीन : सब तेरे जैसे ही थोड़े हैं।

छात्र चार : नब्बे फीसदी हम जैसे ही हैं। कोई किसन का बेटा होगा, कोई मास्टर का, कोई मजदूर का। हाँ, यह किसी तालुकदार या मिल ओनर की औलाद हो, तो और बात है। (सभी हँसते हैं)

छात्र एक : (एकाएक विग की तरफ देखकर चलने को होता है

अपने में से एक को आँख मारता है अपने सीने पर हाथ रखकर लम्बी साँस भरते हुए) हाय, वो आ गई —माई सुइट ।

छात्र दो : कौन-सी पिक्चर जायेगा बे ?

छात्र एक : बारह बजे से···अभी आया (चुटकी बजाकर चल देता है ।)

छात्र तीन : मुझे क्लास में जाना है ।

छात्र चार : मार गोली क्लास-क्लास को या-पुर्जी किस दिन काम आयेगी ।···लव स्टोरी हैजस्ट व्ल्यू फिल्म···चल ।

[सभी चले जाते हैं । पात्र उनसे कुछ कहने की मुद्रा में हाथ उठाकर रह जाता है । प्रकाश वृत्त उसी पर आलोकित होता है । दूसरा प्रकाश-वृत्त स्टाफ-रूम की कुर्सियों पर बैठे अध्यापकों पर पड़ता है । चारों छात्र ही चश्मा लगाकर अध्यापक बन जाते हैं, पात्र उनकी ओर देखता है ।]

अध्यापक एक : (पैर सीधे करके एड़ लेता हुआ) बहुत थक गये यार ।

अध्यापक दो : (व्यंग्य से) क्यों नहीं पूरे देश का भार जो है आप पर ।

अध्यापक एक : किस पर भार है यार, लेकिन सभी थके हैं । थकान आज की नीड़ बन गयी है । हर कोई थका हुआ है । काम्पलेक्शन है, जटिलताएँ हैं, समस्याएँ हैं ।

अध्यापक तीन : लेकिन मैं समझता हूँ यह यूनीवर्सल फैक्ट नहीं है । जहाँ मानवीय सम्बन्धों के ऊपर और कोई चीज है— वहीं यह सब कुछ है ।

अध्यापक चार : देखो भई, पालिटिक्स को बातें मत करो ।

अध्यापक तीन : पालिटिक्स। पालिटिक्स ही तो रह गयी है। मैनेजर प्रिंसिपल से पालिटिक्स करता है, प्रिंसिपल हम लोगों से, हम लोग अपने लोगों से। यहाँ तक कि स्टूडेन्ट्स को भी मोहरा बनाते हैं अपनी पालिटिक्स का हम लोग।

अध्यापक चार : उसे पालिटिक्स नहीं कुछ और कहो।

अध्यापक तीन : कुछ भी कहो, अपना उल्लू सीधा करने के चक्कर में सभी लोग उसे सिद्धान्त का लिबास पहनाया करते हैं। पिछले साल सिनेमा के टिकिट्स को लेकर किसने करायी थी हड़ताल ?

अध्यापक एक : तो उसमें क्या मेरा ही हाथ था। प्रिंसिपल साहब के रिश्तेदारों को तो पास नहीं दिया था उसने।

अध्यापक दो : यही बात तो वह कह रहा है कि पूरे सामाजिक ढांचे में हर आदमी अपने हक में मोड़ना चाहता है।

[घण्टा बजता है]

अध्यापक चार : अच्छा होगा—चलो घण्टा बज गया।

अध्यापक एक : होने दो, कितनी जरूरी बात चल रही है।

अध्यापक चार : भाई जान, जरूरी बात वह नहीं है जो होती है बल्कि वह है जिसे हम अपने मतलब से जरूरी समझते हैं। ···फिर औरों को हम दोष देते हैं कि फलाँ नेता बेईमान है, फलाँ अफसर घूसखोर है, फलाँ दूकानदार मिलावट करता है—सभी जो जरूरी समझते हैं वह करते हैं। यह बात और है कि तुम्हारी बात में दम है। बाद में बहस करेंगे।

अध्यापक एक : कुछ भी हो, अपने राम तो प्राकृतिक न्याय में विश्वास करते हैं। जिन्दा वही रहेगा जो ताकतवर पेड़ होगा

—कमजोर मर जायेगा।···हमारे स्टूडेन्ट्स सिनेमा चले गये होंगे—मैं चला घर।

अध्यापक तीन : टालो, अन्धों की हाथी खोज है। हमारे ही नाम कौन-सा सबका भाग्य लिखने का ठेका है—हम लोग भी चलें।

पात्र : (विद्यार्थियों की ही भांति अध्यापकों को भी देखता रहता है, फिर दर्शकों की ओर देखकर) ये भी गये वे भी गये, कोई नहीं, सब गये। किताब, कापी, पढ़ाई, अध्यापक, विद्यार्थी सब। बाकी बचा है हम मूर्खों के लिए (उँगली उठाकर दिखाते हुए) साइनवोर्ड। (हँसता है, फिर साइनबोर्ड की तरह स्थिर हो जाता है)

[अँधेरा]

[मंच । प्रकाश । पात्र मंच पर आकर कुर्ता पहनता है, फिर स्थिर हो जाता है ।]

पार्श्व से : (पूरे सम्वाद पर, पात्र स्थिर मुद्रा में) जिन पर भारतीय समाज ने स्वराज्य के कितने सपने सँजोये थे।…हजारों, लाखों बलिदान इनके सहारे अपने सपने छोड़कर विदा हो गये। समाज उन्हीं सपनों में झूलता रहा। आश्वासनों पर कराहती रही जनता। विदेशी शासन के हटते ही स्वर्ग का मार्ग देखती रही जनता। सपनों का द्वार खुले वर्षों बीत गये—किन्तु आज भी मूल्यहीनता, गरीबी, संत्रास, उत्पीड़न और अराजकता का नगा नाच—आज भी। …किन्तु आज भी यह…

पात्र : (गति में आकर व दर्शकों को कुर्ता दिखाकर) साइन-बोर्ड (सफेद टोपी पहनकर) साइनबोर्ड (कार ड्राइविंग का अभिनय करके)—साइनबोर्ड (हाथ फैला-फैला कर होठ चलाता है फिर प्रकट में)—साइनबोर्ड।

[एक आगन्तुक का प्रवेश]

(उससे ऐसे बातें करता है जैसे कि आगन्तुक गूंगा हो। बार-बार वह अनभिज्ञता प्रकट करता है)

पात्र : (अध्यापक की मुद्रा में) तुम्हारा नाम क्या है? साइन-बोइइर्ड ।

आगन्तुक : (सिर हिलाकर कुछ याद करता हुआ-सा) साइ इ इ

पात्र : हाँ, हाँ साइ इ इ

आगन्तुक : साइइइइइन

पात्र : बहुत अच्छे, साइन···बोर्ड

आगन्तुक : (पूरे विश्वास को दर्शाता हुआ) साइन···बोर्ड

पात्र : बहुत अच्छे ।

आगन्तुक : हमारा तुम्हारा एक ही नाम ?

पात्र : सच है। पहले जन्म में तुम्हारा नाम कैडर था । मत-दाता था ।

आगन्तुक : (तनकर) हूँ ।

पात्र : हूँ ।

[दोनों तनकर खड़े हो जाते हैं—एक दूसरे के आमने-सामने । हाथ के इशारे से एक दूसरे से बोलने के लिए कहते हैं । संचालित प्रकाशयुक्त, स्पाट्स के सहारे बोलते हैं ।]

पात्र : (खँखार कर गला साफ करते हुए) अनेक रंगों का ध्वज धारण करने वाला बाप का इकलौता राजकुमार हूँ । लँगोटी से कोठी तक एक नजर रखता हूँ । वोट मुझे देना···।

आगन्तुक : देश की जनता का वह हिस्सा हूँ, जो बालिग के नाम से रजिस्टर्ड है और नाबालिगों की तरह फुसलाहट में आकर वोट डाल देता है ।

पात्र : बिरंगे मेरे बड़े भाई हैं । सब भाई एक हैं । (ऐसा प्रकट करता है, जैसे झूठ बोल गया है, और चुपचाप

वह बात कहना चाहता हो) पर...पर अब अलग हैं —वोट हमें देना।

आगन्तुक : हम कोई बेवकूफ नहीं हैं, जो छोटे-छोटे स्वार्थों पर लड़ मरें। गाँववाद, फील्डवाद के ऊपर उठ चुके हैं—वोट सिर्फ भूमि पुत्र, प्रान्त पुत्र कहेंगे।

पात्र : किसानों का रहनुमा हूँ ?

आगन्तुक : मैं किसान हूँ।

पात्र : मजदूरों का पक्षधर हूँ।

आगन्तुक : मैं मजदूर हूँ।

पात्र : मैं सवर्णों का अगुवा हूँ।

आगन्तुक : मैं सवर्ण हूँ।

पात्र : मैं हरिजनों का नेता हूँ।

आगन्तुक : मैं हरिजन हूँ।

पात्र : मैं भाषाई आन्दोलन खड़ा करूँगा।

आगन्तुक : मैं साथ हूँ।

पात्र : दंगे कराऊँगा।

आगन्तुक : मैं साथ हूँ।

पात्र : मुझे गद्दी चाहिए।

आगन्तुक : मैं साथ हूँ।

पात्र : कुर्सी चाहिए।

आगन्तुक : साथ हूँ।

पात्र : हुकूमत चाहिए।

आगन्तुक : साथ हूँ।

पात्र : जिन्दाबाद।

आगन्तुक : जिन्दाबाद-जिन्दाबाद।

पात्र : प्रान्तवाद।

आगन्तुक : जिन्दाबाद।

पात्र : जिन्दाबाद।
आगन्तुक : जिन्दाबाद।
पात्र : परिवारवाद।
आगन्तुक : जिन्दाबाद।
पात्र : स्वार्थवाद।
आगन्तुक : जिन्दाबाद।
पात्र : जातिवाद।
आगन्तुक : जिन्दाबाद।
पात्र : धर्मवाद।
आगन्तुक : जिन्दाबाद।
पात्र : ......।
आगन्तुक : जिन्दाबाद।
......।
जिन्दाबाद।
......।
जिन्दाबाद।
......।
जिन्दाबाद।
......।

[आगन्तुक पालतू जानवर की तरह पीछे-पीछे दौड़ता है, पीछा करते प्रकाश के सहारे उनकी गति का अनुमान लगता है। अपनी-अपनी जगह दोनों ठहर जाते है कुछ क्षणों के लिए]

पात्र : बोलो किसके साथ हो ?
आगन्तुक : तुम्हारे साथ।
पात्र : मेरा कोई यकीन नहीं।

आगन्तुक : फिर भी तुम्हारे साथ।

पात्र : मेरा कोई असली घर नहीं।

आगन्तुक : फ़िर भी तुम्हारे साथ।

पात्र : मेरा कोई असली नाम नहीं।

आगन्तुक : फिर भी तुम्हारे साथ।

पात्र : (स्वर की ताल बढ़ाता हुआ सा) मैं रोज दल बदलता हूँ।

आगन्तुक : फिर भी तुम्हारे साथ।

पात्र : मैं तुमको ही मूर्ख बना रहा हूँ।

आगन्तुक : फिर भी तुम्हारे साथ।

[पात्र हाथ के इशारे से थोड़ी देर के लिए आगन्तुक को रोकता है। आगन्तुक भूखे कुत्ते की तरह उसकी ओर जैसे दुम हिला रहा है।

पात्र : वोट दो। (भिखारियों की स्वर मुद्रा में)

आगन्तुक : यह लो।

पात्र : सुरक्षा के, दृढ़ता के, स्थायित्व के नाम पर वोट दो।

आगन्तुक : यह लो।

पात्र : बाप के, भाई के, मामा के, किसी के भी नाम पर वोट दो।

आगन्तुक : यह लो।

पात्र : पूंजीवाद, समाजवाद, के नाम पर वोट दो।

आगन्तुक : यह लो।

पात्र : हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिख, ठाकुर, ब्राह्मण, कुर्मी वाली, चमार किसी के भी नाम पर वोट दो।

आगन्तुक : यह लो।

पात्र : प्रेम, घृणा, डन्डा खुशामद किसी भी नाम पर वोट दो।

आगन्तुक : यह लो।

५

(पात्र स्वर मुद्रा बदल देता है ।)

पात्र : मुझे पहचानते हो ।

आगन्तुक : बहुत अच्छी तरह ।

पात्र : (चश्मा उतार कर) अब पहचाना ?

आगन्तुक : (विभोर होता सा) वही हो ?

पात्र : (टोपी उतार कर) अब ?

आगन्तुक : वही हो ।

पात्र : (पीछे मुड़कर के) अब ?

आगन्तुक : वही हो ।

पात्र : (अध्यक्ष होकर) अब ?

आगन्तुक : वही हो ।

पात्र : हूँ तो किसके साथ हो ?

आगन्तुक : तुम्हारे साथ ।

पात्र : (बोल कर नहीं सिर्फ इशारे से पूछता है)

आगन्तुक : तुम्हारे साथ।

पात्र : ......।

आगन्तुक : तुम्हारे साथ ।

पात्र : ......।

आगन्तुक : तुम्हारे साथ ।

[पात्र एक स्थान पर खड़ा हो जाता है । तुम्हारे साथ तुम्हारे साथ इस तरह कहता है, जैसे पात्र उसे हर जगह दिखाई दे रहा है । पात्र भी ऐसी मुद्राओं का प्रदर्शन करता है जैसे कि वह आगन्तुक को ऐसा करने का निर्देश दे रहा हो । मूक होकर थोड़ी देर केवल इशारे से इस क्रिया को दुहराते हैं । फिर एक दूसरे के

चेहरों में किसी कमी का अनुभव करते हैं और एक दूसरे को बताना चाहते हों।]

आगन्तुक : मेरा चेहरा ?

पात्र : मेरा चेहरा ?

[दोनों ही बार-बार चेहरे पर हाथ फेर कर शीशे की तरह कई बार देखते हैं]

आगन्तुक : मेरा असली चेहरा ?

पात्र : मेरा असली चेहरा ?

(दोनों थोड़ी देर मूर्खों की भाँति एक दूसरे को देखते हैं)।

आगन्तुक : सब चेहरे असली हो गये···अएँ···अएँ···सब चेहरे ?

पात्र : (जल्दी से कुर्त्ता और टोपी उतार लेता है) सब चेहरे असली चेहरे हो गये। (दर्शकों को इंगित करता हुआ) आप लोगों में से कोई न तो पहचान सकता इन दोनों को।···कातिल हमदर्द बन गया है। पहचानों इन्हें —अपनी उम्मीदों के कपड़े। कर्तव्य और अधिकार। जनता और नेता संज्ञा और सर्वमाम—पहचानों (हँसता है थोड़ी देर। फिर स्थिर हो जाता है)

(अंधेरा)

[प्रकाश। फैक्ट्री का सायरन सुनाई देता है। पात्र की स्थिर मुद्रा गति में आती है। वह सायरन की आवाज के साथ-साथ उस ओर बढ़ता है। विग के पास होते ही पुनः अँधेरा। प्रकाश के साथ-साथ फैक्ट्री का गेट दिखायी पड़ता है। पीने के लिये सिगरेट बनाने लगता है।]

मजदूर : (हथौड़ा चलाने का प्रतीक देकर सुस्ताने की स्थिति में) कितनी देर है छः बजने में काका ?

मजदूर दो : अभी तो डेढ़ घण्टा बाकी है। हार गये क्या ?

मजदूर एक : (हाँफते हुए ही) नहीं तो वैसे ही पूछा।

मजदूर दो : वही तो मैंने कहा। तेरी उम्र में ता काम की आंत नहीं थी मुझे।

मजदूर एक : पर अब क्या बात है काका ? तूने जो कुछ खा-पहन लिया, अपने को नसीब भी तो नहीं। यहाँ तो इतनी मेहनत से दो जून की रोटी चल जाय—यही बहुत है।

मजदूर दो : सो तो है ही। हम मन लगाकर काम करते थे तो मालिक के पिता मरने जीने का ख्याल भी रखते थे।

मजदूर एक : अब क्यों नहीं रखते काका ?

मजदूर दो : बातें बदल गई हैं। समझने का तरीका बदल गया है और ज्यादा बड़ा आदमी बनने की ललक पैदा हो गयी है। वह तो कहा करते थे कि मजदूर हमारे हाथ पैर हैं।

मजदूर एक . पर आज। आज तो पैसा और मशीन बड़ी चीज हो गई है। हमारी कौन सी गिनती है। सब अपना हिसा लेते हैं। एक हमीं हैं जो बलि के बकरे बन जाते हैं।

मजदूर दो : सो कैसे भइया ?

मजदूर एक : काका। मालिक जहां से कच्चा माल लेता है उसको मुँह माँगा पैसा देना ही होगा—काहे से कि वह किसी दूसरे के हाथ बेच देगा। कोई माल थोड़े हो खराब हो जायेगा—गरज हो तो खरीदो। जमीन वाला अपना भाड़ा चुकता करा लेगा—नहीं तो कहेगा हटाओ अपना खँडोला। भला पइसा जो लगायेगा—ब्याज काहे छोड़ेगा। मशीन बनानेवाला भी लाला की गाँठ से पूरा पइसा निकलवा लेगा। बाकी रहे हम-आप यानी मजदूर। मजदूरी नहीं मिली तो अपना दिन बेकार। चाहे जितना पैसा मिले, काम तो करना ही पड़ेगा। तो काका—हमारा जितना पेट कटता है, मालिक उतना ही मोटा होता है।

मजदूर दो : यह तो कभी नहीं सोचा भइया।

मजदूर एक : हाँ काका, इसका मतलब यह हुआ कि आदमी के सोचने का तरीका बदल गया है।

मजदूर दो : मैंने भी तो यही कहा, बिल्कुल सही है। हर आदमी तो इसी से बेमन काम करता है। सब को अपनी तन-ख्वाह से मतलब है।

मजदूर एक : यही तो बात है। कोई काम नहीं करना चाहता।

अपना भार, अपनी गलती एक दूसरे पर डालना चाहते हैं। मालिक कहता है पैदावार न होने के कारण मजदूरों की हड़तालें हैं। मजदूर कहते हैं, मालिक हमको भरपेट रोटी नहीं देना चाहता। पैदावार बढ़े चाहे न बढ़े, उसकी तिजोरी भरनी चाहिए।

मजदूर दो : तो कैसे भइया। हमको भी समझाओ।

मजदूर एक : सीधी सी बात है काका। मालिक ने एक तो मजदूरों की जायज माँगें नहीं मानी, उधर से अपनी ओर से ताला बन्दी कर दी। क्या फायदा हुआ मालूम ? ताला बन्दी और हड़ताल की मजदूरी बची। माल जो बना था उसी को चौगुने दाम पर बेच दिया। लाला का कहीं नुकसान हुआ ? भला बताओ। हाँ अपन लोगन के बच्चों की पढ़ाई छूटी। पैसा नहीं मिला ईलाज बिना मर गये और जाने क्या-क्या। क्या आप ज़ानते ही नहीं हैं ?

मजदूर दो : हाँ भइया सही बात है। लेकिन यह सब क्यों होता है। लोग अपने घर को ही अपना घर नहीं समझते हैं, अपने देश को अपना देश नहीं समझते हैं—आखिर क्यों ?

मजदूर एक : कहा न, सब सोचने का तरीका है काका। जुम्मेवारी को भार समझते हैं। समाज को अपनी व्यक्तिगत चीजें समझते हैं।

मजदूर दो : लेकिन सुतते हैं पहले आदमी-आदमी को बहुत प्यार करता था।

मजदूर एक : किन्तु आज पागलपन को प्यार करता है। वह खुद नहीं जानता कि वह क्या करता है। (स्वगत, उठकर गन्दे कपड़े से हाथ की कालिख पोंछते हुए) एक जमना

था जब आदमी जंगलों में रहता था, फल-फूल और मांस खाकर जीवन बिताता था। कोई दुख नहीं था —कोई कष्ट नहीं था। फिर उसने खेती करना सीखा। फिर भी कमोबेश सुखी था। शक्तिशाली लोगों ने जब लोगों की जमीनें हड़पना शुरू किया उनके मवेशी अपने हाते में बाँधना शुरू किया; यहाँ तक कि इनको और उनके बच्चों को गुलाम बनाने लगे, बीवियों को रखेलें—झगड़ा तब से शुरू हुआ। और आज—आज तो उसका नग्न नाच है—नंगा नाच।

मजदूर दो : तब क्या किया जाय ?

मजदूर एक : क्या करोगे काका—लोग बदलाव के नाम पर सिर्फ हिलना चाहते हैं। करवट बदलने का नाम नहीं लेता कोई।

मजदूर दो : तब क्या होगा ?

मजदूर एक : पागलपन।

मजदूर दो : इतनी बड़ी उमर में उसे कई बार देखा है।

मजदूर एक : (बौखलाया-सा) तो इसके आगे—इसके आगे—कुछ भी हो, यह कुकुर बांच नहीं चलेगा।

मजदूर दो : कौन करता है यह कुकुर बांच ?

मजदूर एक : कौन नहीं करता है इसे ? कोई शौक में करता है, कोई देश में करता है, कोई मजबूरी में करता है। जिसको जैसा मौका मिलता है। रिश्ते बदल लेता है। यहाँ तक कि लोग अपना ईमान और भगवान भी बदल लेते हैं। (सिर हिलाते हुए) भगवान।

[दूसरे प्रकाशवृत्त में पात्र दिखायो देता है। पैन्ट और टाई में। मंच के एक कोने में थोड़ी देर खड़ा रहकर पात्रों की गति-

विधियों पर प्रतिक्रिया देकर दर्शकों में मिल जाता है।

मिल मालिक : (स्वगत) इस साल फायदा कम हुआ—मशीन टूट गयी—माल नहीं मिला—फारेन में खर्च—ज्यादा हो गया—पार्टियाँ ज्यादा कर दीं—नो—एम—नहीं, नहीं अबकी बोनस ज्यादा दे दिया—तनखाहें बढ़ी थीं (जल्दी से सिग्रेट को लाइटर से जलाकर टहलने लगता है।

मजदूर नेता : नमस्कार मालिक।

मिल मलिक : (मुड़कर रोब से सर हिलाता है)

मजदूर नेता : ... ...

मिल मालिक : ... ...

मजदूर नेता : म् म् मालिक।

मिल मालिक : (गुस्से से) क्या मालिक-मालिक लगा रखा है। मजदूरों की नेतागीरी करने का ठेका ले रखा है। एक हड़ताल नहीं रुकवा सके। तनखाहें बढ़ानी ही पड़ीं। ...बोनस देना ही पड़ा...खर्च...घटा...खर्च...।

मजदूर नेता : सु-सुनिये तो...।

मिल मालिक : क्या सुनें मुंह माँगी रकम दी है तुम्हें।

मजदूर देता : अ अ अब नहीं होगा—कई साल नहीं होगा। मैंने आपस में झगड़ा कर लिया है। मजदूरों को बाँट दिया है। कमजोर कर दिया है। अब नहीं लड़ पायेंगे।

मिल मालिक : या उन लोगों ने तुम्हारी दलाली को पहचान कर तुम्हें छोड़ दिया। ताकत तो उन्हीं के पास है—तुम तो सौदागर हो।

मजदूर नेता : मालिक मैं ही एक माना नेता हूँ। बाकी सब भेड़ हैं। उन्हें हांकेगा कौन ? मैंने अपने आगे उठने ही कहाँ

दिया किसी को। (हैं हैं करते हुए) सेवक ने ऐसा कर दिया है, सब एक-दूसरे को कोस रहे हैं मारने-मरने पर उतारू हैं। वह कुछ नहीं कर पायेंगे अब।

मिल मालिक : (प्रसन्न होता हुआ) वेरी गुड, वेरी गुड। अपने भतीजे को कल काम पर भेज देना। (मजदूर नेता घिघियाने लगता है।)

[अँधेरा]

[एक प्रकाशवृत्त। मजदूर नेता ही चश्मा और टोपी पहन कर बैठा है, और खड़ा हो जाता है। दूसरे प्रकाशवृत्त पर पात्र बैठा है। ड्राइंग रूम में दोनों बैठते हैं। टेलीफोन पर वार्ता होती है।]

मिल मालिक : क्या सेवा करूँ ?

नेता : आप लोग भामाशाह हैं। राष्ट्र सदैव अपने भाग्य-निर्माण में आपके योगदान की बाट जोहता है।

मिल मालिक : अरे साहब···

नेता : नहीं भई। आप उस भामाशाह के भी आगे···आप न केवल सरकार के निर्माण में हाथ बँटाते हैं बल्कि उनको बनाये रखने में भी मदद करते हैं। आप वह भामाशाह हैं जो लड़ाई के साथ-साथ फैक्ट्री में भी पैसा लगाते हैं।—हम लोग चिरऋणी हैं आपके।

मिल मालिक : पुरानी बातें पुरानी हैं। तब के राणाप्रताप वर्षों घास की रोटी खाकर जिये।

नेता : (हँसी उड़ाते हुए) आप भी किन दकियानूसी विचारों को लेकर बैठ गये। सिर्फ समझने का फर्क है। घास की रोटी खाना एक स्टंट था ताकि जनता को अपने नेता के त्याग में भरोसा रहे। हम लोग भी वायुयान होते हुए पैदल चल लेते हैं। (हँसते हुए)—है न।

मिल मालिक : (व्यंग्य दृष्टि से देखकर) ठीक ही है। आदेश दें क्या करना है ?

नेता : आदेश क्या ? एक बार पुनः हमारी बाँह पकड़ कर सिंहासन तक ले चलिए, और मैं आपके भामाशाहत्व के लाइसेन्स का रिन्यूवल कर दूं। यह तो सौदा है। राज्य और भामाशाहों के बीच। (हें-हें करके हंसता है।)

मिल मालिक : अबकी बार तो…।

नेता : कोई बात नहीं, अब की बार मैं ही आ जाऊँगा। यह तो चलता ही है। कभी नाव गाड़ी पर, कभी गाड़ी नाव पर।

मिल मालिक : मेरा मतलब था शायद उतनी सेवा न कर सकूं, जितनी पिछले चुनाव…।

नेता : उं हूं, पिछले चुनाव, पिछले चुनाव का क्या चक्कर लेकर बैठ गये हैं आप। भला मेरे गद्दी पर रहते कभी कष्ट हुआ है आपको। पिछले वालों को जाने दीजिए। जिसका नमक खाओ, उसका काम करो।…हम लोगों की आदत आप जानते हैं—जिस पत्तल में खाते हैं, उसमें छेद नहीं करते हैं।

मिल मालिक : लेकिन हमें भरोसा कैसे हो कि सरकार कौन बनायेगा ?

नेता : (बेवकूफों की तरह हंसकर) क्या बात कही है। अरे सेठ, सरकार वही बनायेगा जिसे आपका आशीर्वाद प्राप्त होगा।

मिल मालिक : (गि-गिल हो उठता)

नेता : हम सरकार जरूर बनायेंगे। हमारी नाकेबन्दी मजबूत है। विरोधियों में फूट पड़ी है। पचास फीसदी खरीद फरोख्त हो गयी है। चन्दे में अबकी हमारा पलड़ा

भारी है। अबकी बार किसी भले आदमी को टिकट नहीं दिया है। भला कैसे हार जायेंगे। (गर्व से) पोलिंग वूथ से लेकर संसद तक हमारा कब्जा।

मिल मालिक : (दर्शकों की ओर देखकर—स्वगत) चन्दे की रकम भी इसी बात पर निर्भर करती है। (प्रकट) बिल्कुल फिजा आपके माफिक है।

नेता : तब बीस लाख रुपये आपके जिम्मे हैं।

मिल मालिक : (कुछ कहने को है)···

नेता : सेठ जी आप चिन्ता न करें। मेरी वफादारी पर यकीन करके हाँ कर दें।

मिल मालिक . (झूठी "ना" का अभिनय करता हुआ) मुझे कभी उजर हुआ है—लेकिन···।

नेता : (प्यार भरे तैश में) फिर, लेकिन-वेकिन क्या ? अभी आपका शक गया नहीं। अरे भई सेठ, जनता एक-एक दाने को भले ही तरस गई हो, पर आपके चन्दे का कभी एक रुपया भी डूबा ? चार गुने ज्यादा कमाया है आपने मेरे रिजीम में···।

मिल मालिक : (जैसे कोई चीज हाथ से निकली जा रही हो) म··· म· ·मुझे कोई ऐतराज है—कल सुबह हाजिर हूँगा।

नेता : (चोगा रखने को उठता हुआ) अच्छा नमस्कार।

मिल मालिक : चाय पर आइए।

नेता : जी शुक्रिया। एक आवश्यक बैठक में जाना है।

मिल मालिक : बड़ा उपकार किया।

[नेता अनसुना करके चोगा रख देता है]

[दौड़कर मंच पर आते हुए व्यंग्य और उपहास से]

पात्र : शुक्रिया···शुक्रिया। मजदूर बेमन काम करता है··· मजदूर नेता दलाली करता है···मालिक अपनी तिजोरी

भरता है…देश का नेता लूट में हिस्सा लेता है… और…और आप—आप सब लोग यह नाटक समझते हैं…। (हँसता है)

[अँधेरा]

[पान की दुकान]

एक : (दूसरे को दूकान पर बुलाता हुआ) आओ भई आओ, पान तो खाते जाओ ।

मुन्शी : क्या पान-वान । पान, चाय के अलावा भी कुछ है यार ।

तीन : (निकट आता हुआ) रहा होगा, तुम्हारे जमाने में । हमारी तो आजाद देश की भर्ती है । यहाँ तो मिनिस्टर, डारेक्टर, बड़े साहब, छोटे साहब—सब एक ही घाट पर पानी पीते हैं । पानी, पान, चाय—क्यों भई ? (एक और तीन मिलकर हँसते हैं)

मुन्शी : (झल्लाया-सा) किसी को फिकर ही नहीं है ।

एक : किसे फिकर हो भई ?

मुन्शी : सब को होनी चाहिए । फिकर होना तो एक आदत बननी चाहिए । आपको अपनी फिकर होनी चाहिए, अपने परिवार की फिकर होनी चाहिए, अपने आस-पास और अपने देश···

तीन : (बीच में टोंकते हुए) बस, बस, करो, मुन्शी जी । ज्यादा हो रहा है । जब से होश सँभाला है बस एक ही शब्द सुनायी पड़ता है—यह चाहिए, वह चाहिए । क्या हो रहा है, इससे किसी को मतलब नहीं है ।

मुन्शी : यह आप करेंगे। पहले जो चाहते हैं—खुद करके दिखायें।

एक : अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता, मुन्शी जो, दस कौओं में एक कोयल क्या करेगी ? (तीन की तरफ देखता है—दोनों मुन्शी जी को देखकर हँसते हैं)

मुन्शी : (गुस्से से) शर्म आनी चाहिए, आप लोगों को हमसे मजाक करते हुए।

तीन : मुन्शी जी बुरा मत मानिए। यहाँ शर्म किसी को नहीं आती है। माताएं, बहनें नंगी घूम रही हैं—आती है शर्म किसी को ? बच्चे भूख से तड़पते हैं—आती शर्म किसी को ? सरेआम—बलात्कार, हत्याएँ और जरायम होते हैं—आती है शर्म किसी को ?

मुन्शी : तो जाके सड़क पर चिल्लाओ। दफ्तर में क्लर्की क्यों करते हो। नेता बनो।

एक : मुन्शी जी। यह बेचारा नेता क्या बनेगा। नेता तो केवल कहता है। हमें तो कुछ न कुछ करना ही पड़ता है। कुछ नहीं तो दफ्तर में कलम ही चलानी पड़ती है। परिवार का पेट भरना ही पड़ता है। कल के लिए सोचना पड़ता है।

मुन्शी : आप लोग तो ऐसे बोल रहे हैं जैसे हमें यह कुछ करना ही नहीं पड़ता ?

तीन : पड़ता होगा, लेकिन आप महसूस नहीं करते। बहुत से आदमी कूड़े के ढेर की बदबू महसूस नहीं करते।

मुन्शी : (व्यंग्य से) एक तुम हो जो करते हो।

तीन : हाँ मुन्शी जी, हम जैसे कम ही लोग महसूस करते हैं, कुछ लोग बदबू को खुशबू मानते हैं। घूस को वरदान।

…बुरा न मानें तो देखिये तनखाह के ऊपर के पैसे में आपने क्या-क्या बना लिया।

मुन्शी : (तपाक से) मेहनत करते हैं तभी तो कोई दो पैसे दे जाता है। तुम्हारी तरह नेतागीरी करें तो तनखाह में रोटी भी न चले।

एक : ठीक ही है। हर कोई मेहनत, मेहनत, देश-देश चिल्ला रहा है। (व्यंग्य से) मैं तो फर्क ही नहीं कर पा रहा हूँ—एक भक्त और गिरहकट में। दोनों मन्दिर में खड़े हैं, दोनों भगवान की ओर देखकर हाथ जोड़ रहे हैं। लेकिन भगवान के नाम पर दोनों के अलग-अलग काम जारी हैं।

मुन्शी : (तमतमाते हुए) म-म-मैं-मैं…

चपरासी : (व्यवधान डालते हुए) बड़े बाबू आपको साहब बुला रहे हैं।

(दो, टोपी और छड़ी सँभालते हुए हड़बड़ाकर चल देता है) एक ओर तीन धीरे-धीरे चल देते हैं। केबिन का दरवाजा खोलने का अभिनय करते हुए अन्दर जाता है। पात्र कुर्सी पर बैठा फाइल उलट-उलट कर दस्तखत करता है और एक कोने में फाइलें रखता जाता है।)

बड़े बाबू : जी सर, मुझे बुलाया ?

पात्र : (काम रोककर कुर्सी के बल होता हुआ) हां बड़े बाबू बुलाया है। वह बिल जो आपके पास पड़ा है एक हफ्ते से, उसका पेमेन्ट क्यों नहीं कर देते ?

बड़े बाबू : कौन…कौन…वह…वह हो जायगा साहब। कुछ आब्जेक्शन नहीं। इसी से…

पात्र : बड़े बाबू, उसमें कोई आब्जेक्शन नहीं है। आप उसका पेमेन्ट कर दें।

बड़े बाबू : (सलाही रुख से थोड़ा पास आकर) कुछ बात हुई साहब ?

पात्र : (गुस्से से) क्या बात ? कैसी बात ?

बड़े बाबू : (सहमता हुआ) कुछ नहीं, कुछ नहीं। (स्वगत) यह नया साहब तो उन दोनों का बाप है। मैं भी बड़ा बाबू हूँ।

पात्र : बड़े बाबू।

बड़े बाबू : (जैसे होश में आता हुआ) जी, जी सर।

पात्र : फाइल मेरे पास ले आओ।

बड़े बाबू : लेकिन, लेकिन।

पात्र : ह्व, ह्वाट, आई से।

बड़े बाबू : जी, अच्छा···।

(जाकर अपनी कुर्सी पर बैठ जाता है। चश्मा उतार कर मेज पर रखता है। कुछ देर सोचता है। जल्दी से अपनी रैक से कुछ कागज निकाल कर दफ्तर में कई जगह लगा देता है। पात्र घन्टी बजाता है। दो न तो स्वयं जाता है न चपरासी को जाने देता है। कई बार घन्टी की आवाज पर किसी के न आने पर पात्र स्वयं बाहर आता है। पहले चपरासी की ओर देखता है। वह सर नीचा कर लेता है। बड़े बाबू अपना मुँह दूसरी ओर फेर लेते हैं।)

पात्र : (पूरे दफ्तर पर दृष्टि दौड़ाता है और पढ़ता है उस कागज को जिसे बड़े बाबू ने चिपकाया है) असहयोग ···मनमानी नहीं चलेगी···हमारी एकता जिन्दाबाद ···हम एक हैं···(दर्शकों से) देख रहे हैं आप लोग,

देख रहे हैं। जानते हैं क्यों हुआ यह सब ? मैं ईमानदारी से अपना फर्ज पूरा करना चाहता था। असहयोग किससे—जो ईमानदारी से काम करना चाहता है। कौन कर रहा है। मनमानी मैं या देश को रसातल में पहुँचाने वाला बेईमान। इनकी एकता हमारे खिलाफ। गलत लोगों की एकता सही और सच्चे लोगों के खिलाफ। लोग क्यों नहीं एक होते इनके खिलाफ…जवाब दीजिए…नहीं है कोई जवाब आपके पास (जोर-जोर से अपने बाल नोचते हुए) नहीं है जवाब आपके पास नहीं है जवाब, नहीं है जवाब।

[अँधेरा]

[घर का साधारण बेडरूम । आफिस-मेज को ही पलंग में परिवर्तित कर देते हैं]

पात्र : (नशे में धुत पलंग पर बैठते हुए) कोई है घर में, कोई···सब मर गये ।

माँ : तू, तूने आज शराब पी है ?

पात्र : पी है, लेकिन तुम पूछने वाली कौन हो ?

माँ : नालायक, अपनी माँ से ऐसी बातें करते हुए तुझे शर्म नहीं आती ।

पात्र : कौन माँ, कोई माँ—आँ नहीं । तुम्हारी बायलोकिल नीड थी । तुमने हमको पैदा किया । एक सोशल ट्रेडीशन है कि मैं बुढ़ापे में तुम्हें रोटी दे रहा हूँ···और कुछ नहीं ।

माँ : पापी, तू मेरी कोख में जनमते ही क्यों नहीं मर गया ?

पात्र : इसमें नाराज होने की क्या बात है । तुम श्रवणकुमार की माँ बनना चाहती हो और मैं मार्डन युग का बेटा ।

माँ : हे भगवान, यह दुनिया कहाँ जायेगी ?

पात्र : पीछे नहीं लौटेगी, आगे बढ़ेगी । किसके पास इतना वक्त है जो पीछे देखे ।

माँ : (सिसकते हुए) कौन माँ-बाप की चिन्ता करता है ।

पात्र : माँ-बाप । इतना समय किसके पास है । दुनिया तेजी

से आगे बढ़ रही है। सेवा, पूजा, पाठ, दान, धर्म पुरानी चीजें हैं।···ओल्ड, ओल्ड कान्सेप्ट।

माँ : तो इस घर में मेरे लिए कोई जगह नहीं ?

पात्र : है क्यों नहीं। बूढ़े जानवर और पुरानी चीजों के लिए जो जगह होती है—वो तो है ही।

माँ : तू···तू वही है जो मुझे दुःखी देखकर पानी-पानी हो जाता था। अपनी मां के सुख के लिए सब कुछ करने को तैयार था···। तू-तू वही है—वही।

पात्र : हट जाओ मेरे सामने से। मैं इतिहास के पागलपन से दूर रहना चाहता हूँ। मैं नये मूल्यों के लिये नये कल की तलाश कर रहा हूँ। देश कोई नहीं। मैं इस दुनिया को भोगने के लिए अकेला पैदा हुआ हूँ।

माँ : ··· ···

पात्र : सुना नहीं ? दुनिया का भोग करना है, जाओ यहाँ से।

माँ : ··· ····

पात्र : जाओ।

माँ : ···· ···

पात्र : (उठकर मां को खदेड़ता हुआ बाहर कर देता है। मां की सिसकियों की आवाज सुनायी देती है। पात्र वापस आकर सिगरेट सुलगाता है।)

[चश्मा उतार कर मां का अभिनय करने वाली महिला ही पात्र की पत्नी]

पत्नी : (हाथ से उस धुएं को हटाते हुए जो उसके मुंह पर पात्र ने छोड़ा है।) क्या कर रहे हो यह। हमें सिग्रेट का धुआँ अच्छा नहीं लगता।

पात्र : तुम्हें तो दारू सिगरेट कुछ नहीं अच्छा लगता है।

(उसके बदन पर ऊपर से नीचे हाथ ले जाते हुए) लेकिन हमें तुम्हारा पूरे का पूरा बदन अच्छा लगता है। (उसे अपनी ओर खींच लेता है)

पत्नी : (इठलाते हुए) क्या कर रहे हो। छोड़ो न। एक तो जो मुझे पसन्द नहीं उसे पी के आये हो और फिर करवा चौथ के दिन पैर भी नहीं छूने दिया पहले।

पात्र : (हँसते हुए) नयन बाई तो मेरे पैर नहीं छूती।

पत्नी : (छिटक कर हटते हुए) तो क्या···क्या तुम कोठे पर भी····

पात्र : (बेफिक्र-सा) हाँ, हाँ तो क्या हुआ ? इसे भी हम कोठा ही समझते हैं। हमारा तुम्हारा एक लम्बा पूरी उमर का कान्ट्रेक्ट है। और वह कुछ घन्टों का।

पत्नी : मैं-मैं तुम्हारी पत्नी हूँ। इस तरह बात करने में तुम्हें···।

पात्र : लज्जा नहीं आती—यही न ? मैं तुम्हें करवा वाली पत्नी मानकर कहीं फायदा नहीं महसूस कर पा रहा हूँ। लगता है मार्डन दौर में मैं कहीं पीछे रहा जा रहा हूँ। मैं अपने को उन दीवारों के बीच नहीं रहना चाहता, जहाँ से मुझे वह चमचमाती आधुनिक दुनिया न दिखायी दें।

पत्नी : लेकिन····

पात्र : लेकिन-वेकिन कुछ नहीं। (उसे खींचकर बिस्तर पर गिरा देता है बड़े प्यार से) तुमसे एक बहुत जरूरी बात करनी है।

पत्नी : (बनावटी गुस्से से) मैं कोई बात नहीं करती।

पात्र : (जैसे उसकी बात सुनी ही न हो) मेरी जिन्दगी खूबसूरत मोड़ ले रही है। जब तक मैंने अपने आपको

एक मुर्दा अजायबघर बनाये रखा—तुम जानती हो कि मैं किस कुण्ठा और संत्रास के बीच से गुजरा ? मुझे इस बदबूदार जिन्दगी में वापस नहीं जाना है। मैं इस लम्बे कान्ट्रेक्ट को छोड़ नहीं सकता। फिर उसकी मामूली-सी ख्वाहिश है।

पत्नी : (सिर्फ सुनती है)

पात्र : (पत्नी के नेत्रों में प्यार से देखते हुए उसके गालों को अपने दोनों हाथों में लेकर) आज रात···तम्हें रवीन्द्र के साथ गुजारनी होगी।

पत्नी : (जैसे बिच्छू ने डंक मार दिया हो, बिफर कर रोती हुई, हाथ के इशारे से मना करते हुए) तुम्हें मेरे सुहाग की सौगन्ध।

पात्र : ही···ही क्या हुआ। खूबसूरत हो, जवान हो। अगर बिजनेस में ये चीजें इजाफा करें तो बुरा क्या है ? फिर जो चीज मेरे बिजनेस के लिए मुफीद नहीं है मेरे लिए बेकार है।

पत्नी : (दोनों कानों पर हाथ रखकर रोती हुई) भगवान के लिए बन्द कीजिए यह सब।

पात्र : सेवा, सुहाग, भगवान हे-हे-हे-हे-बेरी फनी, बेरी फनी चाइल्डिश—रवीन्द्र आ रहा है (बिग की ओर कदम बढ़ाकर स्थिर हो जाता है)

पात्र : (दूसरे प्रकाशवृत्त पर मुद्रा बदल कर) समझौता कर रहा हूं महारथी।

मां और पत्नी को सजा न देने वाला हार रहा है—हार रहा है (हंसता है) स्थिर हो जाता है।

[अंधेरा]

[मंच पर पूर्ण प्रकाश। पात्र का प्रवेश।

पात्र : (दर्शकों को सम्बोधित करके) आप सब गवाह हैं। मैं अदालत में खड़ा हूँ।···नहीं···मैं अपराधी नहीं हूँ··· हूँ···।

(पात्र के बाल पकड़ कर लाया जाता है) आप जज हैं?

एक : हाँ, जज हूँ।

पात्र : हाँ जज हूँ, नहीं जज भी हूँ।

एक : समझे नहीं।

पात्र : अभी समझाता हूँ (दर्शकों से) यह एक ऐसी बीबी का पति है, जो अपनी फरमाइशों के लिए इसे बेचने तक में शर्म नहीं करती। (जज को देखकर) यह बिक भी रहा है। यह बेचता है, वे गुनाहों को सजा, गुनहगारों को छूट और वे इन्साफ को इन्साफ।

(नोटों की गड्डी देते हुए) जाओ।

(एक चला जाता है।)

दो : मैं भी जज हूँ।

पात्र : शाबाश, तुमने अपना सही परिचय दिया है।

दो : (गौरव का अनुभव करता है)

पात्र : तुम इन्साफ करोगे।

दो : करूँगा।

पात्र : जनता की कसम खाकर कहो कि इन्साफ करूँगा।

दो : जनता की कसम खाकर कहता हूँ, इन्साफ करूँगा।

पात्र : (एकाएक क्रोधित होकर ऊँचे स्वर से) तुम इन्साफ नहीं करोगे···क्योंकि तुम महत्वाकांक्षी हो। तुम्हें इन्साफ से ज्यादा अपनी चिन्ता है। तुम चाहते हो ऊँचे से ऊँचा पद, मौत के बाद भी स्थायित्व। (उसे देखकर) चाहते हो ना।

दो : (सर हिलाकर) हाँ।

पात्र : (दर्शकों से) यह दूसरा नमूना था जो हमें सजा देने के लिए आया था। (एक कागज देते हुए) यह लो ऊँचा राजनीतिक पद।

दो : (कागज लेकर) अच्छा।

पात्र : एक और भी है। बहुत ईमानदार। जिसे न बीबी की फिकर है न अपनी। सिर्फ···।

तीन : (पात्र को नमस्कार करता है और आकर चुपचाप खड़ा हो जाता है ?)

पात्र : तुम फैसला करोगे ?

तीन : ······

पात्र : बोलते क्यों नहीं—पैसा चाहिए।

तीन : सर हिलाकर नहीं।

पात्र : बोतल।

तीन : नहीं।

पात्र : महिला का फोटो दिखाता है।

तीन : नहीं।

पात्र : तो फिर···

तीन : मैंने तो आपको बता दिया था।

पात्र : ओह, समझा, तुम अपने लड़के की नौकरी···

तीन : जी, हाँ जी हाँ। देखिये मेरी अपनी कभी कोई इच्छा नहीं रही। परिवार, मित्र रिश्तेदारों के लिए एक रोटी का प्रबन्ध हो जाए—मैंने आज तक यही किया है।

पात्र : (दर्शकों से) देखा आपने। कानून के पहरेदार सो रहे हैं। इन्साफ के दरवाजे इन्साफ के लिए बन्द हैं।··· कौन करेगा फैसला···वो···या वो···या···या··· यह···कौन करेगा, कौन करेगा मेरा फैसला, कौन (ह-ह करके हँसता है)

(अँधेरा)

[मंच पर एक मेज है। उसके सामने एक कुर्सी पड़ी है। मेज पर हवाई जहाज, एक ऊँचा मकान, कुछ गुड़ियाँ आदि रखीं हैं।]

पात्र : (मंच पर चारों ओर घूमकर बड़ा बेफिकरा सा आकर कुर्सी पर बैठ जाता है। मेज पर रखी सभी वस्तुओं पर एक-एक करके दृष्टि डालता है। फिर···)

पात्र : (हवाई जहाज हाथ में लेकर)···मेरा है।
मोटर···मेरा है।
हवेली···मेरी है।
फैक्ट्री···मेरी है।
परियाँ, खूबसूरत परियाँ···मेरी हैं।
फौज···मेरी है।
हीरे, जवाहरात···मेरे है।
दौलत···मेरी है।
हवाई जहाज,···मोटर, हवेली, खूबसूरत कलियाँ, फौज···हीरे-जवाहरात···दौलत···सब मेरा है।··· सब···।
जहाँ तक जो भी दिखायी दे रहा है, सब मेरा है। सब मेरा है। ये···वो···तुम···आप···सबकुछ मेरा है।···मेरा जीता हुआ ···मेरा भोगा हुआ···मेरे

आर्कषत्व में···मेरे शासन में···मेरी ताकत में हैं।····सब मेरे दिमाग की उपज है···मैंने मिट्टी को सोना बनाया है।····मैंने आदमी को इन्सान बनाया है।····तुम सब मेरे मुरीद हो। मेरे गुलाम····मेरे सेवक····मेरे दास····(बच्चे को गोद में लेकर) मैं सुप्रीम हूँ, बेटे। महान हूँ····राजा हूँ····नेक हूँ····सम्राट हूँ····नेता हूँ···:मैं बड़ा हूँ।····सबसे बड़ा हूँ····सबसे बड़ा····सबसे बड़ा। कहाँ है तुम्हारे मूल्य, तुम्हारी मर्यादाएँ, तुम्हारी आस्थाएँ, तुम्हारे विश्वास, तुम्हारा समाज, तुम्हारा भगवान····। सब····सब मेरी मुट्ठी में है, मेरी मेरी मुट्ठी में (अट्हास कर हँसता है। इतना हँसता है कि उसे दिल का दौरा पड जाता हाथ से सीने के दर्द को रोकने की कोशिश करता है। दायें हाथ का पंजा जो कालिख से भरा है, दर्शकों को दिखाता हुआ, अपने बच्चे की पीठ पर रखता है। मेज पर रखी हुई सारी सामग्री जल्दी-जल्दी अपने मुँह के सहारे ठेलकर बच्चे को सौंपना चाहता है। अन्तिम खिलौने के बच्चे तक पहुँचने पर वह गिर जाता है। बच्चा दोनों हाथों से खिलौना समेटे पीठ दर्शकों की ओर किए है। पात्र उठा हुआ काला पंजा और बच्चे की पीठ पर पड़ी काली छाप दिखायी देती है।

●

अपरिचिता

रघुराज दीक्षित

पात्र-परिचय

स्त्री

तुंगभद्रा
चपला
वर्णा

[चार या पांच अन्य महिलाएँ छठे दृश्य के लिए]

पुरुष

शम्बूक
सुदीप वानर
पल्लव
मल्ल
प्रखर
निलय
मध्यासनी
नारद
वशिष्ठ
राम
महासचिव

[अन्य पुरुष पांच पुरुष-पात्र जो सभाजन ब्रह्मचारी आदिवासी प्रतिहारी अंगरक्षक आदि का अभिनय करेगें ।]

अपरिचिता

[मंच पर चार उच्चासन लगे हैं। चार लोग उन उच्चासनों के समीप बैठे हुए हैं।]

पार्श्व से उद्घोषक : सतयुग।

[ब्राह्मण वेषधारी पहले आसन पर बैठ जाता है।]

पार्श्व से उद्घोषक : त्रेता।

[क्षत्रिय वेषधारी दूसरे आसन पर बैठ जाता है।]

पार्श्व से उद्घोषक : कलयुग।

[हाथ पैर लौह जंजीरों से जकड़े हैं। काले वस्त्र पहने कृशकाय व्यक्ति धीरे से उठता है और आसन की ओर बढ़ता है, ज्यों ही आसन निकट आने को है—भूमि पर गिर जाता है। उसकी पीठ पर लिखा दिखाई देता है—शम्बूक। एक महिला आकर गिरे हुए शम्बूक और आसनों पर बैठे पात्रों को तथा दर्शकों को देखती है। एक निश्चय करती हुई सी शम्बूक को बायें हाथ से और दायें हाथ से ध्वज उठाकर प्रयाण की मुद्रा बनाती है।]

पार्श्व से उद्घोषक : (स्त्री की प्रयाण मुद्रा पर) जीवन संगिनी तुंगभद्रा, संग्रामी शम्बूक की जीवन संगिनी तुंगभद्रा—अपरिचिता।

[मंच पर अंधेरा]

दृश्य १

[कमर पर घड़ा लिये हुए पानी भरने के लिए जाती हुई एक युवती]

युवती : (कटिवसन पहने, धनुषबाण लिए जाते हुए युवक से) —ये युवक ।

युवक : मेरा नाम युवक नहीं—शम्बूक है ।

युवती : (लजाती हुई) अच्छा । मैं तुंगभद्रा हूँ । कहाँ जा रहे हो ।

युवक : जा नहीं रहा हूँ आ रहा हूँ ।

युवती : कहाँ से ?

युवक : पंचवटी से ।

युवती : (आश्चर्य से) पंचवटी से ।

युवक : हाँ, हाँ । वहीं से तो ।···आजकल मैं धनुर्विद्या के नवीन अभ्यास जो कर रहा हूँ ।

युवती : कौन कराता है वहाँ अभ्यास ?

युवक : एक आर्य युवक राम हैं, उनके अनुज लक्ष्मण । और हाँ आर्य युवक राम की पत्नी सीता भी धनुर्विद्या में पारंगत हैं—वे स्त्रियों को वैसे ही धनु-अभ्यास कराती हैं ।

युवती : (प्रसन्न होती हुई) सच ?

युवक : हाँ तू चलेगी ?

युवती : (प्रसन्नता से) हाँ कल प्रातः किन्तु···वे आर्य होकर

हम अनार्यों के साथ सौहार्द ?

युवक : सचमुच नवीनता है तुम्हारे प्रश्न में। आर्यों का अंतर्द्वन्द्व बढ़ रहा है। ब्राह्मण और क्षत्रिय दो वर्गों में विभक्त होकर संघर्ष कर रहे हैं।

युवती : कैसे कह सकते हो इसे ?

युवक : महाराज सहस्त्रबाहु की पराजय और महान सम्बर युद्ध इसके प्रमाण नहीं हैं क्या ?

युवती : युद्ध की धारा का यह विपरीत प्रवाह कैसे हो रहा है।

युवक : राज्य के प्रसार की अनिवार्यता के लिए आपसी मत-भेदों को थोड़े समय के लिए भूलना ही पड़ता है। कितने ही देव और असुर संग्राम इसके प्रमाण हैं।

किन्तु···

युवती : किन्तु क्या ?

युवक : राज्य के प्रसार के बाद उसकी सम्पत्ति और सीमाओं का विभाजन प्रसारकों के बीच एक नवीन उलझन खड़ी कर देता है।

युवती : वे सम्भवतः आयुधधारी ब्राह्मण जिन्होंने क्षत्रिय कर्म करने वाले बताकर अपने को अलग किया था। विभा-जन में वे ही आड़े आए हैं न ?

युवक : हाँ दूसरे को वे एक अंश भी नहीं देना चाहते। शस्त्र और शक्ति के बल पर सारे का सारा समेट लेना चाहते हैं।

युवती : तब उसी का परिणाम होगा···आर्यों के दूसरे वर्ग ने जातियेत्तर सहायता चाही होगी।

युवक : नहीं तो पूर्ण विजय के प्रति वे आस्थावान् कैसे हो सकते हैं ?

युवती : शम्बूक, इस आस्था और अनास्था से हमारी स्थिति में क्या अन्तर आता है। हमें तो सदैव ही लड़ना है। आयुधधारी आर्य वर्ग और कभी आयुधधारी आर्य वर्ग की ओर से।

युवक : तो तुम कहना चाहती हो कि हम स्थिरता की स्थिति में हैं, जड़ चेतना हीन स्थिति में ?

युवती : और नहीं तो क्या ? हमारे बीच में वही अशिक्षा, गरीबी और हमारी कमाई की वहीं लूट खसोट। मुझे तो पूरे आर्य वर्ग से घृणा है।

युवक : (मुस्कराता हुआ) यह हमारी सबसे बड़ी भूल है कि हम अपने शत्रु को पहचान कर भी अनदेखी कर देते हैं। (थोड़ा रुककर) असुर, राक्षस तो अनार्य हैं—हैं न ? वे क्यों करते हैं हमारा शोषण ? वे क्यों लेते हैं बिना मुद्रा दिये हुए हमसे काम ? वे क्यों करते हैं हमारी बहू-बेटियों से बलात्कार ? उत्तर दो ?

युवती : ………।

युवक : चूंकि वे अपने को उसी वर्ग से जोड़ रहे हैं। जिसमें आयुधधारी आर्य हैं। उनके लिए हम वैसे ही हैं जैसे अनायुधधारी आर्य।…तुमने पहले उचित कहा था कि हमारा शोषण सतत है।

युवती : हाँ यही तो मैंने कहा था।

युवक : लेकिन तुम यह क्यों नहीं सोचतीं—यदि हम जड़ होते मृत होते तो गति कहाँ से आती। हमारे संघर्ष, आए दिन आर्य वर्गों द्वारा हमारी सहायता की याचना—कोई अर्थ नहीं रखती क्या ?

युवती : (समझने की मुद्रा में) हाँ।

युवक : तब हमें नये सिरे से सोचना होगा। आर्यों के विरुद्ध

युद्ध में सम्राट रावण की हम सहायता करें या न करें ?

युवती : क्यों ?

युवक : इसलिए कि वह कोई परिवर्तन नहीं लाना चाहते। आर्यों के सिंहासन पर स्वयं बैठना चाहते हैं—बस।

युवती : हां सच ही तो है नहीं तो त्रिसरा और सुबाहु हाथ पर हाथ धरे बैठे कैसे रहते ? हमारी संचेतना का विकास क्यों नहीं करते ?

युवक : (मुस्कराकर) लगता है तुम मेरे विचार से सहमत हो रही हो।

युवती : (सर हिलाकर) हां।

युवक : तो चलोगी कल ?

युवती : (पुनः सर हिलाकर स्वीकृति देती है)

युवक : तब हमें महत् कार्य के लिए विदा लेनी चाहिए।

युवती : विदा !

युवक : विदा !

[अंधेरा]

दृश्य २

[शम्बूक एक पर्वत शिला पर बैठा बाण सुधार रहा है। अज्ञात गौरवर्ण धनुर्धर का प्रवेश। शम्बूक के अन्य सहयोगी उस पर बाण सन्धान कर देते हैं।]

शम्बूक : (उन्हें रोकते हुए) सुयोग्य धनुर्धर ! बिना पूर्व सूचना से आपके आगमन का प्रयोजन मैं नहीं समझा ?

धनुर्धर : यदि मैं कोई भूल नहीं कर रहा हूँ तो आप महर्षि शम्बूक हैं ?

शम्बूक : निश्चय ही, किन्तु···।

धनुर्धर : वानर हूँ। मेरा नाम सुदीप है।

शम्बूक : स्वागत है। मेरे योग्य कोई आदेश ?

सुदीप : निवेदन है। मैं मृगया के लिए आया था। मेरे आखेट को यहाँ की वन्य जातियों ने हठात् छीन लिया है। मैं इसका न्याय चाहता हूँ।

शम्बूक : किसने अभिप्रेरित किया आपको मेरे समीप आने के लिए?

सुदीप : एक वृद्धजन, जो सुदूर से घटना का अवलोकन कर रहे थे। उन्होंने ही आपका सुनाम भी बताया।

शम्बूक : न्याय होगा आपके साथ। अपराधी को दण्डकारण्य का न्याय विधान क्षमा नहीं करेगा।

सुदीप : धन्य हैं आप।

शम्बूक : (अनसुना करते हुए) पल्लव ?

पल्लव : आदेश महर्षि ?

शम्बूक : यदि महर्षि सुदीप का आरोप सत्य है तो इन्हें जाकर न्याय दिलाओ। वे मुझे पुनः दर्शन देना चाहें तो ससम्मान इन्हें यहाँ ले आओ।

[पल्लव और सुदीप का प्रस्थान]

चपला : महर्षि। एक आशंका का निवारण क्षम्य है क्या ?

शम्बूक : (मुस्कराकर) चपला, मैं किसी शंका का निवारण क्या कर सकूंगा। स्वयं ही किसी आशंका में न चाहकर भी सिमटता जा रहा हूँ।

चपला : वह क्या महर्षि ?

शम्बूक : किशोरावस्था से लेकर इस प्रौढ़ावस्था तक मैंने दफ्तर के लोगों में समानता और आत्मनिर्भरता को स्थापित करने का प्रयास किया, फिर भी······

चपला : फिर भी महर्षि ?

शम्बूक : (व्यंग्य से हँसकर) राज्याश्रयी भाषा और संस्कारों से लोगों को मुक्ति नहीं दिला सका। तुमने उसके हाव-भाव देखे हैं—पल्लव के।

चपला : हाँ।

शम्बूक : कैसा लगा तुम्हें ?

चपला : ······

शम्बूक : महर्षि सुदीप क्या सोच रहें होंगे—यहाँ भी उन्हें दासों के दर्शन हुए। मेरी सारी दीक्षा व्यर्थ हो गयी।

चपला : महर्षि ऐसा न सोचें। पल्लव ने सब कुछ सम्मान में किया है।

शम्बूक : हाँ चपला, तुम अपने नाम को जो धन्य कर रही हो। पल्लव की पत्नी के रूप में तुम्हारे वक्तव्य से मैं सहमत

हूँ, किन्तु सम्मान का अर्थ मानवता के ऊपर तो नहीं होता ।

चपला : (सर हिलाकर हाँ करता है ।)

शम्बूक : सम्मान और सत्कार शब्दों का प्रयोग; समाज में बराबरी बनाये रखने के लिए करते हैं यदि उनसे एक ओर गर्व और दूसरी ओर हीनता उत्पन्न होने लगे तो उन्हें छोड़ देना चाहिए ।

चपला : मेरे सहमत होने का औचित्य है ?

शम्बूक : कर्म से अधिक सम्मान तो केवल मूर्ख चाहता है अपनी मूर्खता को छुपाने के लिए ! इससे अच्छा तो कवच भी नहीं मिल सकता उसे । और दूसरी ओर समाज का क्या होता है जानती हो ?

चपला : (मंत्र मुग्ध सी 'न' के लिए सिर हिलाती है ।)

शम्बूक : समाज मूर्खों, अकर्मण्यों और स्वार्थियों का अड्डा बन जाता है । यही पशु प्रवृत्ति के लोग समाज को विकृत कर देते हैं और वहीं से आरम्भ होता है हम तुम जैसे लाखों-लाखों लोगों का उद्भव—जिन्हें वे जीवित तक नहीं रहने देते । केवल पशुवत व्यवहार—पशुवत । (विह्वल हो जाता है ।)

[पल्लव का प्रवेश]

पल्लव : महर्षि ।

शम्बूक : (स्थिर मुद्रा में जाता हुआ)

पल्लव : महर्षि, आखेट महर्षि सुदीप को मिल गया है । अपराधी को दण्डाधिकारी के अधीन कर आया हूँ ।

शम्बूक : (सिर हिलाकर स्वीकृति देता है)

पल्लव : महर्षि सुदीप आपसे पुनः भेंट करना चाहते हैं ।

शम्बूक : (पूर्ण सामान्य मुद्रा में) मैं स्वयं चल रहा हूँ । कहाँ हैं वे ?

पल्लव : (हाथ उठाकर दिखाते हुए) वे रहे।

[शम्बूक उन्हें लिवाकर लाता है। शिला पर दोनों साथ-साथ बैठते हैं।]

शम्बूक : आप थके-थके से हैं। (चपला से) जलपान की व्यवस्था करो। (अन्य पात्रों से) आप लोग विश्राम का तनिक अवसर दें इन्हें। मैं स्वयं इनके साथ हूँ।

सुदीप : बहुत कष्ट हुआ आपको ?

शम्बूक : आपकी उपस्थिति इस वन का सौभाग्य है।

सुदीप : (विषय बदल कर) इस व्यवस्था को देखकर मन बहुत प्रसन्न हुआ महर्षि। मुझ जैसे आगन्तुक के प्रति भी न्याय, महानता का द्योतक है।

शम्बूक : (विषय बदलकर) यदि मेरा अनुमान सही है तो आप इस वन से आखेट और इस क्षेत्र से कुछ अन्य आशाएँ भी रखते हैं ?

सुदीप : (संयत होते हुए) आपकी गुप्तचर क्षमता सराहनीय है। मैं विशेष कार्य के लिए ही आया हूँ।

शम्बूक : यदि मुझे पूर्वाभास होता तो दण्डक जन आपके स्वागत में उपस्थित होते। अब मुझे ही स्वागत में स्वीकार कीजिए।

[दोनों हँसते हैं।]

शम्बूक : हाँ तो......?

सुदीप : (अपनी बात आरम्भ करता है) महर्षि विन्ध्य के उत्तर और दक्षिण का राजनैतिक मानचित्र बदल रहा है। गोदावरी, नर्मदा और भागीरथी की धाराओं पर संघर्ष है। विदर्भ, दण्डक, महेन्द्र और किष्किन्धा घटनाओं के केन्द्र बने हैं, किन्तु सबसे अधिक अशांति दण्डक में ही है।

शम्बूक : तात्पर्य ?

सुदीप : स्पष्ट है। मूल निवासियों को यहाँ की भूमि पर पूर्ण स्वामित्व का नैसर्गिक अधिकार है। किन्तु लंकेश ने अपनी सुगठित छापामार टुकड़ी नए सिरे से सेनापति सुबाहु की देखरेख में छोड़ रखी है। स्वरूपनखा उनके गुप्तचर विभाग का संचालन कर रही है।

शम्बूक : ज्ञात है और ?

सुदीप : राजकुमार जयंत।

शम्बूक : हूँ, इन्द्र पुत्र।

सुदीप : हाँ अवन्तिका नरेश इन्द्र के पुत्र ! परिचित हैं आप उनकी नीतियों से। राक्षसों और देवों की गतिविधियां लगभग एक जैसी हैं। कहने को तो वे एक दूसरे के शत्रु हैं। और तीसरा संकट हैं धनुर्धर क्षत्रिय आर्य राम। यद्यपि उनकी गतिविधियाँ देवों और राक्षसों जैसी नहीं हैं—फिर भी—।

शम्बूक : तुम्हारी राजनैतिक शंकाओं पर मैं गम्भीरता से सोच रहा हूँ, और मानता हूँ कि आक्रमक हमारी भाषा, संस्कृति इतिहास और हमारे उत्पादन को पूर्ण शक्ति के साथ नष्ट करता है। वे भी ऐसा ही करेंगे।

सुदीप : (उछलकर बैठते हुए) उचित है महर्षि, सर्वथा उचित है, कोल, किरात, भील, रीछ, बानर भुक्तभोगी हैं इसके। इनके विद्यालय उजाडे गये, पुस्तकें जलाई गईं, संग्रहालयों में आग लगायी गई।

शम्बूक : और सबसे अहम् कार्य यह हुआ उनकी मण्डियाँ नष्ट हो गईं। इन आक्रामक कबीलों ने अपने उत्पादन की बढ़त को स्थायित्व देने के लिए उन्हें अपने आधिपत्य में ले लिया।

सुदीप : बड़ी संख्या में हम कार्य विहीन हुए और···और···।

शम्बूक : और हम सभी क्षेत्रों में पिछड़ गए। महर्षि सुदीप, किन्तु इसका निदान क्या है ?

सुदीप : यही प्रयोजन है मेरा आपके पास आने का। मेरा तो विचार है कि इन पर धावा बोल दें और इन्हें खदेड़ दें। हमारे ऐसा करने से अन्य दलित भी अपना साहस दिखा सकेंगे···इस पर मैं एक सम्मेलन बुलाना चाहता हूँ।

शम्बूक : सम्मेलन का विचार तो उचित है, किन्तु खदेड़ने का निर्णय करना उग्रता होगी।

सुदीप : क्यों महर्षि ?

तुंगभद्रा : प्रवेश के साथ (बीच में व्यवधान करती हुई) क्योंकि शस्त्र की उपलब्धि और उसके उपयोग की क्षमता ही बहुत नहीं होती। शस्त्र के कौशल की चरमगति के के लिए जन-जागरूकता का भी अपना स्थान होता है। जन-सहमति क्रान्ति का कवच है। उसकी सफलता।

सुदीप : (कुछ समझने की स्थिति में)

शम्बूक : अन्यथा न लें महर्षि। यह मेरी संगिनी तुंगभद्रा है। बाह्य विभाग एवं महिला संगठन का दायित्व इन्हीं पर है। वास्तव में इनकी अनुपस्थिति का आभास देकर मैं आपको कष्ट नहीं देना चाहता था। मुझे अवकाश दें। मध्याह्न के भोजन पर मिलूंगा।

सुदीप : सामूहिक नेतृत्व की दृढ़ता का फल तो मुझे आज ही देखने को मिला।···देवि, कुछ अन्य विषयों पर भी हमारा ज्ञानवर्धन करेंगी—मेरा विश्वास है।

तुंगभद्रा : (अनसुना करके) महर्षि शम्बूक की बात से मैं भी सहमत हूँ कि आन्दोलन की रीढ़ है जन जागरण।

यदि जन समुदाय परिवर्तन के साथ न हुआ तो शासक या शक्तिशाली वर्ग आन्दोलन के नेतृत्व को अपराधियों का लिबास पहना देगा। आततायी और राजद्रोही कह देगा। लोगों में कुण्ठा बढ़ेगी और आने वाला प्रकाश थोड़े समय के लिए ठहर जायेगा।

सुदीप : मैं समझा नहीं।

तुंगभद्रा : (मुस्कराते हुए) शक्ति सम्पन्नों का प्रचार तंत्र सुगठित होता है। देखिए न, आपकी जाति को मात्र बानर ही रहने दिया। मनुष्यों की कोटि में ही नहीं रखा। हमें मनुष्यों की कोटि में रखा भी तो स्पर्श ही पाप कह दिया। यक्षों ने गायकी कला का सारा इतिहास ही भुला दिया। उनकी वैभवशाली वीर परम्परा का लोप कर दिया गया। ऊपरी खामियों की गहरी सतह दी गयी और हमारी अच्छाइयों को पल्लवित होने से पहले ही काट दिया गया।

सुदीप : तब इसके लिए मार्ग क्या है ?

तुंगभद्रा : अधिकारिक रूप से तो कुछ नहीं कह सकती, किन्तु अपने प्रयासों से अवगत करा सकती हूँ।

सुदीप : बानर सहित अन्य वर्ग उपकृत होंगे।

तुंगभद्रा : आइए।

[दोनों उठकर चल देते हैं।]

[अँधेरा]

दृश्य ३

[प्रयोगशाला। आम्र कुंजों के बीच पर्ण में सुसज्जित कुछ लोग कार्यरत हैं।]

तुंगभद्रा : महर्षि सुदीप, ये हैं, हमारे कतिपय प्रयास।

सुदीप : (पूरी प्रयोगशाला पर दृष्टि डालकर) प्रयोगशाला का विभाजन प्रभागों के रूप में होगा ?

तुंगभद्रा : हाँ महर्षि। यह है हमारा भाषा और इतिहास विभाग। हमारी कोई लिपि नहीं थी। लगता है लम्बे संघर्ष में वह लुप्त हो गई या अध्ययन का अवकाश न होने से ऐसा हुआ हो। और यही कारण रहा हो हमारे इतिहास की क्रमबद्धता के विनाश का भी। लिपि की पुनर्स्थापना और इतिहास लेखन का कार्य फिर से आरम्भ किया है हमने। महर्षि शम्बूक स्वयं इस प्रभाग को देख रहे हैं।

सुदीप : इस क्षेत्र में हम कोई कार्य नहीं कर सके। वैसे इतिहास लेखन का दृष्टिकोण क्या होगा आपका ?

तुंगभद्रा : हमारा इतिहास सामान्य जन के जीवन-स्तर का लेखा जोखा है। सम्राटों और महाराजाओं की रंगशालाओं का संकलन नहीं।

सुदीप : तब इतिहास का लेखन और अध्यन ?

तुंगभद्रा : हाँ भाई सुदीप, इतिहास के लेखन और अध्ययन दोनों का अर्थ है विकास के चरण का अवलोकन।

सुदीप : यही मत मेरा भी है।

तुंगभद्रा : आवश्यक भी है क्योंकि हमलावर तो हमारे अतीत को हमसे दूर रखना ही चाहता है। ताकि हम पुनः उस ओर न मुड़ सकें। वह अपनी संस्कृति देता है। उसके स्थान पर अपनी भाषा देता है। जिससे उसका अपना अस्तित्व बना रहे। किन्तु हमें जीवित रहने के लिए अपना अतीत खोजना ही होता है।

सुदीप : ऐसा न हुआ तो संस्कारों के रूप में बची धरोहर भर से होगा क्या ?

तुंगभद्रा : तनिक मतभेद है यहाँ पर आपसे। पूरे के पूरे संस्कार चाहे वह इतिहास की कड़ी ही क्यों न हों, हमारे लिए लाभप्रद नहीं होते। संस्कार व्यवस्था की उपज होते हैं। परिवर्तन की शृङ्खला में यदि हम उनका मोह न छोड़ पायें तो पीछे रह जायेंगे।

सुदीप : जैसे ?

तुंगभद्रा : प्रताड़क वर्ग ने अपने अत्याचारों को बनाये रखने के लिए जो भय के संस्कार हममें उत्पन्न किये, उनकी मृत्यु के बाद भी हम उन्हें त्याग नहीं पाये। उनके भूत तक की पूजा करने लगे।

सुदीप : (सहमति व्यक्त करता है।)

तुंगभद्रा : हमें छोड़ना ही होगा नई संरचना के लिए उन्हें। वर्ग के उत्थान के लिए नये संस्कारों की प्रतिस्थापना करनी ही होगी।

सुदीप : उचित ही है देवि। हम भी विचार करेंगे इस पर।

तुंगभद्रा : यह रही स्थानीय उपज की वस्तुओं की उत्पादन प्रयोगशाला।

सुदीप : (असमंजस में पड़ता हुआ) देवि !

तुंगभद्रा : महर्षि शम्बूक का दृढ़ विचार है कि पैदावार की कमी और उनकी कोटि की निम्नता ही दासता का कारण है, आप जानते हैं कि आर्य और देववर्ग कितना प्रयोग-शील है। सुख सज्जा से लेकर खेती और अस्त्र-शस्त्र में वे कितने आगे बढ़ गये हैं। (हल्की हँसी के साथ) सुना है ऋषि विश्वामित्र तो कृषि और यातायात पर अनूठे और नवीनतम प्रयोग कर चुके हैं।

सुदीप : मरुस्थल में पनप सकने वाली वनस्पति, नागफनी, मदार, एरण्ड, वृक्षों में जामुन, कटहल, नारियल, गेहूँ आदि की खोज की।

तुंगभद्रा : देवों और ब्राह्मणों की दुग्धामृत देने वाली गाय से अधिक दूध देने वाली भैंस। देवों के प्रिय वाहन अश्व के स्थान पर अधिक समर्थवान् उष्ट्र की सृष्टि भी तो विश्वामित्र ने ही की। यहाँ तक कि अन्तरिक्ष में त्रिशंकु नामक यात्री भेजा।

सुदीप : पर सुना है अन्तरिक्ष का प्रयोग तो सफल नहीं रहा।

तुंगभद्रा : प्रयोग तो था ही। सफलता, असफलता पर वार्ता यहाँ विषयान्तर है।

सुदीप : और असुर भी तो…।

तुंगभद्रा : पीछे नहीं हैं। अजगव धनुष का निर्माण तो आर्य वर्ग के लिए चुनौती ही है। सीता स्वयंवर का राजनैतिक लाभ असुरों की आँख में धूल झोंककर इसी के सहारे उठाया आर्यों ने।

सुदीप : सुना यह भी है कि विश्वामित्र का ही प्रयोग था जिससे अजगव धनुष संयन्त्र को नष्ट कराया।

तुंगभद्रा : निश्चित ही विश्वामित्र जैसे विज्ञानी अपनी वर्गीय जीवन्ता में लगे हुए हैं और हम एक हैं…।

सुदीप : आपकी चिन्ता उचित ही है देवि !

[आगन्तुक का प्रवेश]

मल्ल : पचास योजन चलने वाले झंझा की स्थिति में अपने अस्तित्व को बनाये रखने वाली नौका का प्रयोग आज पूरा हो चुका है।

तुंगभद्रा : (प्रसन्न होती हुई) बधाई हो मल्ल। अब शत्रु हमें इतनी आसानी से उजाड़ नहीं पायेगा।

मल्ल : देवि, अनुमानित शस्त्र और सैन्य भार से दुगना भार होते हुए भी न तो नाविक और न नौका पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।

तुंगभद्रा : यह तुम्हारी वैज्ञानिक समझ की विजय है मल्ल। (उपस्थित अन्य पात्र से) क्या आज्ञा है ?

सुदीप : देवि, अन्यथा न लें तो—इनका परिचय ?

तुंगभद्रा : प्रखर हैं शस्त्र अनुसंधान विभाग के अध्यक्ष।

सुदीप : तब तो ऐसा संबोधन उचित नहीं है। मुझे लगा आप सेवक की भाँति कुछ जानना चाहती हैं।

तुंगभद्रा : मित्र सुदीप ! साथियों में तो समानता होनी ही चाहिए फिर व्यक्तिवाद के बढ़ाव से तो असमानता ही आती है। इस पूरे प्रदेश में यह कहीं नहीं है। देखिए न प्रखर और मुझमें, प्रखर और महर्षि में, प्रखर और मल्ल में, प्रखर और औरों में भला अन्तर ही क्या है। लिंग और वर्ण-भेद भी हम मानते नहीं। मेरा आपके प्रति व्यवहार कहीं कुछ ऐसा लगा क्या ? वैसे प्रखर आर्य हैं, प्रखर अग्निहोत्र।

सुदीप : (आश्चर्य से) आर्य ब्राह्मण।

तुंगभद्रा : हाँ ब्राह्मण। क्यों ? यह कौतूहल का विषय तो नहीं जो सही रूप से मानवता में विश्वास रखते हैं। वे रूप

हमारे साथ हैं, प्रखर भी।

सुदीप : (लजाकर) मैं इस प्रदेश के लिए विद्यार्थी ही हूँ।

तुंगभद्रा : अरे नहीं, प्रखर यह बताने आया है कि उसके अस्त्रों की मारक शक्ति पहले से अधिक है और ज्यामितिक गति से बढ़ी है।

सुदीप : (आश्चर्य से) वे अस्त्र हमें प्राप्त हो सकते हैं ?

तुंगभद्रा : क्यों नहीं, निर्माणाधीन हैं, आप चाहें तो…

सुदीप : इस संबंध में फिर बात करेंगे।

तुंगभद्रा : महर्षि सुदीप, हम चाहते हैं कि निकटवर्ती प्रदेशों से सुमधुर सम्बन्ध बनाये रखने के लिए हम लोगों को समानता और आवश्यकता पर आधारित व्यापार और सांस्कृतिक सम्बन्ध बढ़ाने चाहिए।

सुदीप : हम भी यही चाहते हैं। आगामी सम्मेलन में अन्तप्रदेशीय राजनैतिक स्थिति के साथ ही साथ इस विषय पर भी विचार करना चाहते हैं।

तुंगभद्रा : निश्चित ही। औषधियों और सेतु-शिल्प के विषय में वानर कबीले के अनुभवों के लाभ, संगीत और कला में दक्षों की खोज का लाभ, नाविक व्यापार में निषादों के प्रयास का लाभ, मुद्रा और आभूषणों के निर्माण में राक्षसों और असुरों के ज्ञान का लाभ हमें उठाना ही चाहिए।

सुदीप : देवि तुंगभद्रा, रीछ कबीले की राजनैतिक सूझ-बूझ और महर्षि शम्बूक के सामाजिक आर्थिक साम्य के लिए प्रतिपादित सिद्धान्तों के लाभ आपने क्यों नहीं गिनाये।

तुंगभद्रा : रीछ कबीला सचमुच आगे बढ़ा हुआ है। हम तो इस

क्षेत्र में प्रयास ही कर रहे है···अच्छा चलिए महर्षि आपकी प्रतीक्षा कर रहे होंगे। भोजन का समय है।

[प्रस्थान]

[अँधेरा]

दृश्य ४

[शम्बूक झोपड़ी के सामने के खेत में कुदाल से गुड़ाई कर रहे हैं। तुंगभद्रा टोकरी बनाने में व्यस्त हैं। बिना व्यवधान के अपना-अपना कार्य कर रहे हैं।

निलय और पर्णा अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए]

पर्णा : महर्षि व्यस्त हैं, श्रमस्वेद से नहा रहे हैं। इस समय कौन कहेगा इन्हें कि ये अपने युग का महान दार्शनिक है।

निलय : और देवि भी तो तन्मय हैं।

पर्णा : प्रदेश का गुरुतर भार है उन पर।

निलय : एक क्षण का अवकाश नहीं लेते दोनों।

पर्णा : यही हमारे लिए चुनौती हैं, विकास के लिए मार्ग हैं।

[शम्बूक नेत्र उठाकर देखते हैं, तुंगभद्रा भी अनुगमन करती है उसका]

शम्बूक : क्या समाचार है पर्णा।

तुंगभद्रा : आओ निलय।

[पर्णा और निलय कुटी में प्रवेश करती हैं]

पर्णा : महर्षि हनुवर प्रदेश में सम्पन्न होने वाले अन्तर्प्रदेशीय

सम्मेलन के लिए आप और देवि तुंगभद्रा की पूरी तैयारी हो गई है।

शम्बूक : किन्तु...

निलय : दण्डक परिषद ने यही निर्णय किया है।

शम्बूक : हमें परिषद के आदेश का पालन करना ही होगा। किन्तु पर्याप्त समय है—मैं व्यक्तिगत रूप से कुछ निवेदन करना चाहता हूँ।

तुंगभद्रा : परिषद की बैठक चल रही है निलय ?

निलय : हाँ देवि। मुझे इस निर्णय को सूचना के लिए आप के पास भेजा गया है। आप कहें तो यह भी सूचना दे दूं कि आप लोग स्पष्टीकरण के लिए परिषद के समक्ष उपस्थित होना चाहते हैं।

शम्बूक : शुभस्तु, हम स्वयं ही चल रहे हैं। आप दोनों कृपया सूचना दें।

[सभी का प्रस्थान]

[अंधेरा]

दृश्य ५

[अर्धवृत में पाँच सभाजन बैठे हैं। मध्य का सभाजन अपेक्षाकृत उच्चासन पर आसीन है।]

मध्यासनी : क्चिारकों, शम्बूक और देवि तुंगभद्रा की सम्मेलन में उपस्थिति का विचार सर्व सम्मति से पारित हुआ। सूचना समकक्षी, सभाजनों-पर्णा और निलय द्वारा महर्षि को भेजी जा चुकी है।

सभाजन में से एक : तो अन्य विषय पर विचार प्रारम्भ किया जाय।

[निलय का प्रवेश]

निलय : व्यवधान के लिए क्षमा प्रार्थी हूँ। महर्षि शम्बूक अपने प्रति किये गये विचार पर पुनर्वलोकन का निवेदन करने स्वयं आये हैं—देवि तुंगभद्रा के साथ।

मध्यासनी : दण्डक परिषद उनके निवेदन का स्वागत करेगी।

[शम्बूक तुंगभद्रा का प्रवेश]

शम्बूक : सभाजन, हनुवर देश में सम्पन्न होने वाले दलित सर्व-जातीय सम्मेलन में दण्डक के प्रतिनिधित्व का अवसर प्राप्त कर मैं उपकार का अनुभव करता हूँ। मेरे प्रति-निधित्व से स्पष्ट है कि परिषद सम्मेलन को विशेष महत्त्व दे रही है। किन्तु दण्डनीय न हो तो परिषद के समक्ष कुछ निवेदन करूँ।

मध्यासनी : देवि तुंगभद्रा का भी विषय यही है जो महर्षि का

अथवा भिन्न ?

तुंगभद्रा : इन्हें निवेदन करने का अवसर दिया जाय मेरा यही अभिप्राय है।

मध्यासनी : हाँ महर्षि ?

शम्बूक : मेरे कुछ प्रश्न हैं ?

मध्यासनी : परिषद अवसर देती है।

शम्बूक : हम दोनों का ही प्रतिनिधि के रूप में चुनाव अर्थपूर्ण है क्या ?

मध्यासनी : निश्चय ही। दण्डक की मर्यादा और सम्मेलन की गरिमा के अनुकूल है।

शम्बूक : दण्डक की मर्यादा मात्र दो मूर्तियों की उपासना से सुरक्षित नहीं रह सकती। दण्डक के लिए चाहिए, पग-पग पर शम्बूक, चिह्न-चिह्न पर तुंगभद्रा।

सभाजन से : विचार अच्छा हो सकता है किन्तु प्रयोग में···

शम्बूक : सभाजन, क्षमा करें यदि सामूहिक नेतृत्व को स्थान न दिया गया तो हर जन कल्याणकारी नेता पूजा की वस्तु बन जायेगा। वह ऊपर हो जायेगा, अराजक हो जायेगा।···और अन्त में श्रद्धा और भक्ति के आवरण में वह इस तरह लिपट जायेगा कि आप को उसे अवतार मानना ही पड़ेगा।···उचित होगा यह दण्डक के लिए ?

सभाजन में से : प्रगति के प्रवाह के लिए क्रियाशील नेतृत्व आवश्यक है।

शम्बूक : सहमत हूँ किन्तु गति की निरन्तरता और एक व्यक्ति के प्रति निष्ठा में विरोधाभास है। प्रवाह के लिए बराबर अनुकूल परिस्थितियाँ चाहिए और क्रमिक नेतृत्व···अनेक आन्दोलनों की अकाल मृत्यु का कारण

एक व्यक्ति के प्रति निष्ठा भी रही है।

सभाजन में से : एकाग्रता के लिए निष्ठा आवश्यक नहीं समझते आप ?

शम्बूक : हो सकता है, पर मात्र निष्ठा हमें भीरू तर्कहीन और परावलम्बी बना देती है। शत्रु इसका लाभ उठाकर बढ़े हुए नेतृत्व को नष्ट कर देता है। हमारे स्वर को सदैव के लिए समाप्त करने का प्रयास करता है। यदि छाया चाहिए तो नई पौध लगानी होगी।

सभाजन में से : (बुझे स्वर में) सम्मेलन महत्व का है।

शम्बूक : मैं अनदेखी नहीं कर रहा हूँ। मैं जानता हूँ सम्मेलन पीड़ित जनों को नये रूप से संगठित करने का वृहद प्रयास है। उनके पुराने जातीय आधार को बदलने का अनुक्रम है। प्रताड़ित जीवन से मुक्ति के लिये नये कष्टों, तपों की ओर ले जाने की दिशा है। भले ही हमें उल्टे खड़े होना पड़े—इसे बदलना ही होगा, मैं यह भी जानता हूँ।

मध्यासनी : फिर महर्षि का प्रस्ताव क्या है ?

शम्बूक : दण्डक प्रतिनिधित्व करे।

सभाजन में से : शम्बूक की ओर देखते हैं।

शम्बूक : इस सम्मेलन के लिए निलय और पर्णा का नाम मैं प्रस्तावित करता हूँ।

तुंगभद्रा : मैं अनुमोदन करती हूँ, क्योंकि यह युवक है, पराक्रमी है। उत्साहजनक मुखाकृतियाँ हर क्षेत्र में आयें-दण्डक की यही तैयारी होनी चाहिए।

[सभाजन एक दूसरे की ओर देखते हैं, किसी निर्णय पर पहुँचने की स्थिति में]

मध्यासनी : सभाजन, महर्षि शम्बूक और देवि तुंगभद्रा के तर्कों से सन्तुष्ट हैं। सभाजन पर्णा और निलय को सम्मेलन

के प्रतिनिधि के रूप से भेजने का निर्णय भी लेते हैं न केवल इसलिए कि महर्षि का प्रस्ताव है वरन् दण्डक की आवश्यकता भी है······सभा को दूसरे प्रस्तावों को अन्य सत्र तक स्थगित करता हूँ।

[अँधेरा]

दृश्य ६

[खेत में महिलायें बेढ़ लगाने के लिए हाथ में बेढ़ के पौधे लिए हुए प्रवेश करती हैं। कुछ देर बेढ़ लगाने के बाद]

पहली महिला : मध्याह्न तक चुप रहकर बेढ़ कैसे लगेगी ?

दूसरी : तब पूर्वाह्न करके लगेगी।

पहली : नहीं दीदी, कोई गीत हो जाय जो स्फूर्ति भी आयेगी और काम भी हो जायेगा।

दूसरी : ना बाबा ना।

[सभी स्त्रियाँ दूसरी स्त्री से जैसे मनाने के लिए प्रार्थना करती हैं।]

दूसरी स्त्री : (गर्व से बेढ़ एक ओर रखकर दोनों हाथ कमर पर रखते हुए सभी स्त्रियों से) अथक श्रम करो विश्राम का नाम लिया तो कशा से चमड़ी उधेड़ दूंगी, चलो आरम्भ करो।

[सभी स्त्रियाँ इठलाकर सहमती हैं। उनमें से एक उसे इंगित करके गीत प्रारम्भ करती है।]

तुम्हारी…

[गीत]

तुम्हारी फीकी पड़ेगी चाँदनी
जब सूरज उगेगा मेरा….

अँधेरी रात तो जानी है,
किरन की प्रात भी आनी है।
तुम्हारी खुलनी है उस दिन आँख भी
जब घर घर जगेगा मेरा···
हमारी साध की अभिलाषा
नये विश्वास की परिभाषा
तुम्हारी बेसुर बजेगी रागिनी
जब सरगम सजेगा मेरा···
नहीं रोने के दिन आने हैं
ये दिन हँसने के घर जाने हैं
तुम्हारी धरती छुटेगी पाँव से
जब परचम उठेगा मेरा···

[तुंगभद्रा गीत समाप्त होते ही बेढ़ लेकर खेत में आ जाती है। खड़ी हुई स्त्रियाँ भी बेढ़ लेकर लगाने लगती हैं]

एक महिला : दीदी स्वागत है। हम सब पर्याप्त थे।

तुंगभद्रा : गीत गाने के लिए न।

एक महिला : (लजाकर) कौन-सा काम रह गया है आपके बिना?

तुंगभद्रा : कौन कर रहा था मेरा काम?

महिला : नहीं दीदी, कदापि मेरा यह अर्थ नहीं है, आपके ऊपर अनेक दायित्व जो हैं।

महिला : सबसे आगे भी तो है आपकी पंक्ति। हमीं लोग हैं पीछे।

तुंगभद्रा : तो मुझे नहीं आना चाहिए था न।

महिला : दीदी, मेरा अर्थ···

तुंगभद्रा : समझ रही हूँ। काम के बँटवारे का अर्थ एक गायन ही तो नहीं होता। श्रम तो समान है। हमारा,

तुम्हारा किसी का भी हो। शारीरिक, मानसिक कैसा भी हो। ऐसा न हुआ तो हमारे बीच भी दो वर्ग बन जायेंगे। तब एक दूसरे को समझने में कष्ट होगा।

अन्य महिला : समझी नहीं दीदी।

तुंगभद्रा : (मुस्कराती हुई) जिस तरह शारीरिक और मानसिक श्रम हमारे अपने स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है वैसे ही समाज के लिए भी दोनों वांछनीय हैं।

अन्य महिला : हम इसी से चाहते हैं कि एक श्रम दूसरे से ऊँचा न माना जाय।

तुंगभद्रा : हाँ।

अन्य महिला : न केवल यह बल्कि स्त्री और पुरुष के श्रम में भी तो अन्तर उचित नहीं है।

तुंगभद्रा : हमारे संघर्ष का प्रबल पक्ष यही है। परिषद में मतदान तक ही सीमित नहीं हैं हम। पर्णा और चपला तो हमारे ही साथ की हैं न। वे स्त्रियों के राजनैतिक अधिकारों की माँगों की अगुवाई कर रही हैं।

अन्य महिला : (इठलाकर) हम भी तो पीछे नहीं हैं।

तुंगभद्रा : (व्यंग्य से) सायं विद्यालय में कब से नहीं आयीं?

दूसरी महिला : हाँ-हाँ बता? कब से नहीं आयी?

तुंगभद्रा : उपहास का विषय नहीं है। अवगुंठन की भांति ही हमें इस लज्जा को भी त्यागना होगा। संक्रमण की इस बेला में सहयोगी पुरुषों के कन्धे से कन्धा मिलाकर चलना होगा। अपने अनुभव बढ़ाना होगा और उसका एक मात्र उपाय है अक्षर ज्ञान।

[सभी महिलाएँ गम्भीर हो जाती हैं]

तुंगभद्रा : एक प्रश्न का उत्तर दें आप सब?

[महिलाएँ तुंगभद्रा की मुखाकृति की

ओर देखती हैं]

तुंगभद्रा बिना किसी बुलावे के आप सब प्रातः खेतों में कैसे पहुँच जाती हैं ?

... ...

तुंगभद्रा : क्यों आपके शरीर का स्वेत सूरज की गरम किरणों को ठण्ठी कर देता है ?

... ...

तुंगभद्रा : क्यों कोल, भील, किरात, असुर, राक्षस तथा अन्य कबीले सबको अपना समझते हैं ?

तुंगभद्रा : क्यों नहीं है यहाँ छुआछूत ?

... ...

तुंगभद्रा : क्यों नहीं है यहाँ एक दूसरे का अंश हड़प लेने की ललक।...बोलती क्यों नहीं ?

... ...

तुंगभद्रा : क्योंकि सामाजिक समानता और न्याय के मानदण्ड को स्वीकारा है दण्डक ने। सभी जानते हैं कि इस भूमि में पैदा होने वाला प्रत्येक कण उनके द्वारा उनके लिए है। सब कुछ सबका है। क्षणिक भूलें भी उन्हें व्यक्तिगत चोट पहुँचाती हैं।

महिलाओं में से एक : हाँ दीदी यही अन्तर है हम में और अन्य कबीलों में।

दूसरी : हमारे यहाँ सम्पत्ति अर्जन का मोह नहीं है।

तुंगभद्रा : सम्पत्ति अर्जन का मोह ही मानव को मानव का दास बना देता है। युद्ध के भयानक ताण्डव की ओर झोंक देता है। समुद्र के बीच देवों और असुरों में हुए भयानक नाविक युद्ध की बात याद नहीं है क्या ?

अन्य महिलायें : हाँ दीदी, जिसे कवियों ने समुद्र मन्थन का नाम दिया है।

तुंगभद्रा : (लम्बी साँस खींचकर) विनाश के तट पर पहुँच गये वहाँ के निवासी।

अन्य महिलायें : ऐसा क्यों हुआ दीदी ?

तुंगभद्रा : समुद्र के गर्भ में विद्यमान वहाँ का खनिज। वहाँ के लोगों का अज्ञान और वहाँ के साम्राज्य द्वारा उनकी आँख में धूल झोंककर सब कुछ अपने पास रख लेने की पिपासा।

अन्य महिलायें : समझी नहीं दीदी ?

तुंगभद्रा : (मुस्कराती हुई) समुद्र में पाये जाने वाले मूल्यवान पत्थरों तेल व अन्य खनिज का ज्ञान ज्यों-ज्यों असुरों और देवों को हुआ उन्होंने अलग-अलग वहाँ के नाग-वंशीय राजा वासुकी और पर्वत वंशीय राजा सुमेर से सम्पर्क बढ़ाया, उससे समझौता किया।

अन्य महिलायें : मौन से समर्थन करती हैं।

तुंगभद्रा : यहाँ तक कि दोनों ने खनिज की खोज का काम साथ-साथ प्रारम्भ किया और जब उपलब्धि हुई तो देवताओं और असुरों ने जो समर्थ थे सब कुछ अपने में बाँट लिया और मूर्ख बना दिया वासुकी और सुमेर को।

अन्य महिलायें : (व्यंग्य से) सम्भवतः इसी कारण कवियों ने वासुकी को रस्सी और सुमेर को मथानी की संज्ञा दी।

तुंगभद्रा : (पुनः मुस्कराती हुई) बहुत समझदार हो गई है। (गम्भीर होती हुई) कहानी सुनाने का औचित्य भी है।

... ...

तुंगभद्रा : उसी पुरानी चाल के सहारे सम्पत्ति की भूख वाले हमें

भी मथानी और रस्सी की तरह प्रयोग में लाना चाहते हैं। हमारा उद्भव गले नहीं उतार सकते वे। इसी से हमने अपने खनिजों की खोज, अपनी रक्षा का भार और अपने उत्पादन को बढ़ानें का दायित्व स्वयं लिया है।

अन्य महिलायें : हम सबके द्वारा किये जाने वाला हर क्षेत्र में कठोर श्रम उसका साक्ष्य है।

तुंगभद्रा : (मुस्कराती है।)

[सभी जैसे प्रसन्न होते हैं]

तुंगभद्रा : (रुककर) समय हो रहा है। अब कल तक के लिए विदा।

[सभी स्त्रियाँ अपने बंधे हुए जूड़े खोलकर बाल पीठ पर डाल लेती हैं।
उत्तरीय को कन्धे पर रखकर चलती हुई विदा लेती हैं।]

[अँधेरा]

दृश्य ७

[मार्ग]

शम्बूक : प्रिये, यहाँ से आरम्भ होती है ऋषि वाल्मीकि की तपोवन सीमा।

तुंगभद्रा : अगम्य तो नहीं है।

शम्बूक : नहीं तो। बहुत सारे विद्यार्थी यहाँ तक तो जीवकोपार्जन के लिए आते हैं।

तुंगभद्रा : जीविकोपार्जन ?

शम्बूक : शिक्षा के साथ इस पद्धति का आविष्कार ऋषि वाल्मकि ने ही किया है।

तुंगभद्रा : क्यों ?

शम्बूक : (हँसते हुए) लग रहा है आज तुम आमोद मुद्रा में हो। मेरी बात को गम्भीरता से ले ही नहीं रही हो। (थोड़ा रुककर) ऋषि कला को राजाश्रयी नहीं बनाना चाहते। साधना को भिखारी नहीं कहना चाहते। अपने पात्रों को लेखनी में बिना किसी भेदभाव के उचित महत्त्व देना चाहते हैं।

तुंगभद्रा : हमारे विद्यालय जैसी ही······

शम्बूक : नहीं यह अतिशयोक्ति होगी, उन्हीं की धरोहर हमारे पास है।

ब्रह्मचारी : (व्यवधान करता हुआ) तपोवन का वाल्मीकि विद्यालय आपका स्वागत करता है।

शम्बूक : अभिवादन।

ब्रह्मचारी : मैं विद्यालय का छात्र और स्वागत समिति का सदस्य ऋषिवर आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

[प्रस्थान अँधेरा]

[मैदान में वाल्मीकि कुछ विद्यार्थियों के साथ बैठे हैं बातचीत हो रही है। केवल होंठ हिलाते दिखाई देते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि वाल्मीकि प्रश्न सुन कर उत्तर देना चाहते हैं]

ब्रह्मचारी : ऋषिवर, अतिथि आपके दर्शन करना चाहते हैं।

वाल्मीकि : (मुद्रा बदलते हुए आँखें खोलते हैं) ओह। शम्बूक उठकर गले लगाते हुए) (विद्यार्थी से कुलपति तक का लम्बा अन्तराल) (आश्वस्त होते हुए शिष्यों को चकित देखकर) यह आपके गुरु भाई शम्बूक हैं दण्डक महाविद्यालय के कुलपति और यह उनकी पत्नी।

शम्बूक : तुंगभद्रा।

वाल्मीकि : (विद्यार्थियों की ओर इंगित करके) यह तुम्हारी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए इतिहास के विशेष विद्यार्थी

शम्बूक : प्रसन्नता हुई कुलपति। आपको देखकर तथा अध्ययन में लगे अपने साथियों को देखकर।

वाल्मीकि : (प्रसन्न होते शम्बूक को देखकर) वही स्वभाव। (विद्यार्थियों से) कल के विषय की तैयारी करो। मैं इन्हें कुटिया पर ले जाता हूँ।

शम्बूक : लम्बे समय के बाद तपोवन के उन्मुक्त वातावरण की गन्ध मिली है यदि इससे विमुक्त न करें तो कृपा होगी।

वाल्मीकि : जैसी तुम्हारी इच्छा। (तुंगभद्रा को देखकर) विवाह कब किया तुमने ?

शम्बूक : सूचना नहीं दे पाया। फिर…

वाल्मीकि : विवाह संस्कार न होकर दायित्वपूर्ति भी रहा होगा।

शम्बूक : हाँ यह भी था।

वाल्मीकि : (तुंगभद्रा से) अवगुंठन क्यों ?

शम्बूक : (लजाकर) आप आर्य जो हैं।

वाल्मीकि : किन्तु यह तो आर्येतर लोगों की वस्तु है।

शम्बूक : पर सब आर्यों में अपना लिया है तो शिष्टतावश करना ही चाहिए।

वाल्मीकि : (गम्भीर हो जाते हैं) शम्बूक, क्या आर्य और अनार्यों के नाम से खींची गई यह पुरानी सामाजिक रेखा मिटेगी नहीं ?

शम्बूक : ……

वाल्मीकि : कथित वर्ण व्यवस्था देखने में कितनी सुन्दर लगती है। पर है कितनी शोषक। चौथे वर्ण को कोई अधिकार नहीं।

तुंगभद्रा : हां ऋषिवर।

वाल्मीकि : पिता कहो पुत्री।

तुंगभद्रा : (लजाकर) धन्य हो पिता।…अत्रिस्मृति में कहा गया है कि जप, तप, तीर्थयात्रा, संन्यास ग्रहण, मंत्रसाधना और देवता की पूजा इन छः कर्मों के करने से स्त्री व शूद्र पतित हो जाते हैं।

शम्बूक : ब्राह्मणों की सेवा छोड़कर अन्य कोई काम नहीं निर्धारित किया ऋषि पाराशर ने।

तुंगभद्रा : ऋषि पत्नी के साथ इतना बड़ा अपकार करने वाले देवराज उनके लिए क्षम्य हैं और सेवारत शूद्र अक्षम्य।

शम्बूक : महर्षि तो क्या वाल्मीकि विद्यालय की वे सारी दीक्षाएँ जो हमने प्राप्त की थीं व्यर्थ हैं, राम एक ऐतिहासिक पात्र और रावण की वीरता को अक्षुण बनाये रखने वाला रामायण ग्रन्थ व्यर्थ है।

वाल्मीकि : पुत्र ! प्रश्नों को गम्भीरता से लेकर चलने की तुम्हारी तत्परता से मैं प्रसन्न हूँ। जिन कार्यों को मैं नहीं कर सका उस ओर तुम्हारी खोज सराहनीय है।···लेखनी को कृपाण से न जोड़कर मैंने एक अपराध किया··· केवल प्रेम का घिसा-पिटा पाठ पढ़कर उसके अभिन्न अंग घृणा के प्रति आँखें बन्द करके एक दूसरा अक्षम्य अपराध किया।

[तुंगभद्रा व शम्बूक जैसे आश्चर्य से ऋषि को देखने लगते हैं]

वाल्मीकि : (स्पष्ट करते हुए) न्याय के प्रति प्रेम है तो अन्याय से घृणा करनी होगी, निर्धनों से प्रेम है तो धनवानों से घृणा करनी ही होगी। शान्ति और सुरक्षा प्रिय है तो हठात और अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए युद्ध करने वालों से घृणा करनी ही होगी।

तुंगभद्रा : कठिन मार्ग है पिता जी !

वाल्मीकि : हाँ पुत्रि ! कठिन है। नहीं तो सारे लोग इसका निर्वाह कर कितने ही विद्वान अपनी विद्वता को सम्राटों के चरणों में अर्पित कर चुके हैं। वशिष्ठ, राज्य संचालक बन गये। जनक, भी आगे स्वयं राजा बनकर भी ऋषि कहलाते रहे। परशुराम, छिछले जातिगत द्वन्द्व में फँसकर रह गये। सुतीक्ष्ण, तटस्थ हैं। भरद्वाज बूढ़ेपन का अनुभव कर रहे हैं···और विश्वामित्र···

शम्बूक : समझौता कर लिया है देव वर्ग और क्षत्रिय वर्ग ने।

वाल्मीकि : हो भी क्या, वशिष्ठ भी तो···

शम्बूक : यही होता है सम्पन्न वर्ग सारे उर्वरक मस्तिष्क का उपयोग अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए करता है।··· विश्वामित्र नये अनाज, नये वनस्पति और नये जीवों की उत्पत्ति के बाद नये मानव समाज की संरचना करना भले ही चाहते हों, पर अमरावती का धनाढ्य देव वर्ग काँप उठा। उसने विश्वामित्र की शर्तों पर वशिष्ठ के माध्यम से समझौता कर लिया।

वाल्मीकि : (गहरी साँस खीचकर) एक आशा धूमिल हो गई।

शम्बूक : हतोत्साहित होने के क्षण नहीं हैं, गुरुदेव ! आपके द्वारा चलाया जाने वाला शिक्षा के क्षेत्र में आन्दोलन प्रतिमाओं को जन्म देगा।

वाल्मीकि : केवल प्रतिमाएँ इकट्ठी करके क्या होगा शम्बूक ! प्रतिमाएँ व्यवस्था के बदलने के लिए अस्त्र तो नहीं बन सकतीं। वे लेखनी और वाणी से स्पष्टीकरण और विश्लेषण कर सकती हैं। उसे मूर्त रूप देने के लिए उपकरण तो नहीं बन सकतीं।

तुंगभद्रा : आप निश्चित तो हैं नहीं।

वाल्मीकि : मैं न चाहकर भी हूँ। मैंने अपने विद्यालय में उत्तर, दक्षिण, पूरब, पश्चिम सभी दिशाओं के विद्यार्थियों का संगम तो बनाया, स्त्रियों को शिक्षा के समान अवसर तो दिया किन्तु कलाकार एक सामाजिक प्राणी भी है यह नहीं समझा सका। उगने वाले सूरज की ताप का उसे भी अनुभव करना चाहिए। अँधेरे से उसे भी घृणा करनी चाहिए। (कुछ देर चुप रहकर, दूसरी ओर देखते हुए) तुमने वह कर लिया पुत्र !

शम्बूक : रहने भी दें गुरुदेव। कितनी बार प्रशंसा करेंगे आप।

मैं भी आपके द्वारा बताये गये मार्ग पर चलना चाहता था—अध्ययन और अध्यापन। किन्तु स्थितियों ने हमें विवश किया। सम्पन्न वर्गों द्वारा किये जाने वाले शोषण ने हमें स्वतः उनके विरोध में खड़ा कर दिया। आत्म रक्षा के लिए हथियार आवश्यक हो गये। और जीवित रहने के लिए उत्पादन।

वाल्मीकि : फिर भी तुम्हारा व्यक्तिगत श्रेय तो…।

शम्बूक : नहीं गुरुदेव। जब आविष्कार व्यक्तिगत सम्पत्ति होते हैं तो निश्चय ही वह वर्ग विशेष का हित साधन करते हैं। समाज के बड़े भाग को लाभ नहीं हानि होती है। विज्ञानी विध्वन्सात्मक प्रवृत्ति का हो जाता है। बड़े युद्धों के लिए प्राण संचार करता है वह।

वाल्मीकि : किन्तु भाई, विज्ञानी, रचनात्मक दृष्टि का हो तो…

शम्बूक : वह समाज के बहुसंख्यक वर्ग के जीवन स्तर को उठाने के उपायों की खोज करता है। निर्माण के उपायों की भूमिका तैयार करता है…किन्तु यह तभी हो सकता है गुरुदेव। जब वैज्ञानिक समाज हो व्यक्ति नहीं।

वाल्मीकि : समाज और व्यक्ति में प्राथमिकता का निर्धारण कल के आने वाले समाज का निर्माण करता है।

तुंगभद्रा : समाज को बनाने में सबसे अधिक हिस्सा लेने वाले वंचित रह जाते हैं। सबसे अधिक इसकी भाजन हैं स्त्रियां। व्यक्ति जिसमें पुरुष का एकाधिकार है माताओं की स्थिति का लोप हो रहा है। स्त्रियों को भोग और मनोरंजन का साधन मात्र बना दिया गया है। कुछ ने तो उसे पांव की जूती तक कह डाला है।

वाल्मीकि : (नेत्र उठाकर गम्भीरता से तुंगभद्रा को देखते हैं किन्तु चुप)।

तुंगभद्रा : सीता पर लगाये जाने वाले आरोप की सूचना क्या नवीन उदाहरण हैं ?

वाल्मीकि : सुना है पुत्रि !

तुंगभद्रा : आपके दर्शन करने का मेरा यही प्रयोजन है । विद्रोही कवि वाल्मीकि क्या अब भी केवल दर्शन काव्य और इतिहास के अध्ययन तक सीमित रहेंगे ।

वाल्मीकि : नहीं पुत्रि ।

तुंगभद्रा : तो इसकी गहराई में जाना होगा आपको । विश्लेषण करें तनिक आप । शोषकों की परिभाषा में नीच कहे जाने वाले रजक को प्रलोभन देकर उसकी जिभ्या का उपयोग किया जा रहा है ताकि सीता के प्रति संचित लोगों की श्रद्धा और उनका विश्वास जाता रहे ।

वाल्मीकि : (चुप)

तुंगभद्रा : मर्यादा का ढिंढोरा पीटने वाले न्याय ने स्वयं राम को यह दण्ड क्यों नहीं दिया । खुले वातावरण में सीता के सतीत्व की परीक्षा लेकर उसको उपहास का पात्र बनाया, क्या दोष था सीता का उसमें ।

वाल्मीकि : (चुप)

तुंगभद्रा : (व्यंग्य से) दोष था ।...सीता द्वारा प्रतिपादित न्याय और समानता में विश्वास बढ़ रहा था जन-समुदाय का । सीता भूमि-पुत्री होने के नाते जन-मानस के दुःख दर्द में जुड़ रही थी । अभिजात कुल को यह क्यों स्वीकार होता ? यही कारण है । उसी व्यक्ति से स्वर दिलाया गया ताकि राज्यतंत्र को अपनी मुट्ठी में रखने वाले लोग सीता की क्रान्ति को मोड़ सकें ।

वाल्मीकि : धारायें मुड़ती नहीं पुत्रि ! क्रान्ति पर जिस गति से प्रहार होता है । उसी अनुपात में उसमें जीवन्तता

बढ़ती है। स्थायित्व आता है। पुत्रि, मेरा सारा जीवन क्रान्ति के साक्ष्यों से जुड़ा रहा। अवशेष में नारी अधिकारों की रक्षा से लगाऊँगा।···सूचना के अनुसार यदि सीता को पुनः वन भेजा गया तो मैं दूंगा उसे आश्रय। स्वीकार है इसके लिए अवज्ञा, आन्दोलन और संघर्ष।

तुंगभद्रा : (प्रसन्न होती-सी) मेरा आना सार्थक हुआ पिताजी। संवर्ष के लिए समर्पण में यह भी एक नाम जोड़ लें।

[शम्बूक, वाल्मीकि, तुंगभद्रा एक-दूसरे को देखते हैं—शान्त रहते हैं कुछ देर]

शम्बूक : अच्छा होता हमारी प्रतिज्ञा के क्षणों को इतिहास अपनी स्मृति में रखता।

वाल्मीकि : मैं इसे इतिहास का अंग बनाऊँगा।

तुंगभद्रा : लेखक इतिहास लिख सकता है, सजों नहीं सकता।

वाल्मीकि : शंका में यथार्थ है। मेरे लेखन का अर्थ बदला जा सकता है। महत्त्वपूर्ण अंशों का लोप किया जा सकता है। महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक खोजों को मात्र रोचक कहानियों की सम्पत्ति बनाया जा सकता है—मैं जानता हूँ।

शम्बूक : तब शोषितों का इतिहास सुरक्षित नहीं है ?

वाल्मीकि : लेकिन शोषितों को अपने इतिहास के लिए शोषकों की अपेक्षा रहेगी। उनकी वीरता की व्याख्या फिर होगी कैसे ? उन्हें अपनी वीरता बखानने के लिए तुम्हारा सन्दर्भ चाहिए ही शम्बूक। न चाहते हुए भी तुम अमर हो, अजेय हो।

शम्बूक : महर्षि, अमरत्व व्यक्ति को नहीं बल्कि आमूल परिवर्तन के लिए हो रहे संघर्ष को मिलना चाहिए।

वाल्मीकि : क्यों नहीं। संघर्ष और बलिदानों के जीवाणु पीढ़ी दर पीढ़ी स्वतः पहुँचते जाते हैं—उन्हें अपेक्षा नहीं होती किसी लिखित इतिहास की।

शम्बूक : सम्भवतः मेरे साथ यही हो ?

वाल्मीकि : चिन्तित हो पुत्र ?

शम्बूक : इसलिए नहीं कि मुझे इस शरीर और प्राण से मोह है, वरन् इसलिए कि मुझे छिछले जातिगत संघर्ष का नायक बना कर महान् क्रान्तिकारी संघर्ष को दूषित कर दिया जायेगा...कौन जानेगा आमूल परिवर्तन के लिए ली गई इस प्रतिज्ञा को ? कौन कहेगा शम्बूक आर्यों और अनार्यों से नहीं शोषितों और दलितों के लिए सम्पन्नों से जूझा था।

वाल्मीकि : मैं जानता हूँ शम्बूक तुम्हारी व्यथा। स्वार्थ के वशीभूत वर्गजन यह भी नहीं कहेंगे कि सम्मिलित थे इस संघर्ष में वाल्मीकि। सम्मिलित थी बलात्कार की आहुति में डाली गई ये स्त्रियाँ, सम्मिलित थे अभिजातों के कलेऊ बने यह निरीह पुरुष और...और वह ऋषि समूह जो अस्थियों के ढेर में बदल गये...सब जानते हुए क्या रुकेगी हमारी अभियान यात्रा ?

शम्बूक : (थोड़ा उत्तेजित होकर) नहीं ऋषिवर, नहीं ! दण्डक पहुँचकर पहली प्रातः को प्रस्थान करेगा पत्रवाहक अयोध्या को। वहीं से आरम्भ होगी हमारी अभियान यात्रा। (रुककर) दण्डक के प्रस्थान के लिए हमें आज्ञा दें।

वाल्मीकि : तुम्हारी क्षमता, तुम्हारा विवेक, तुम्हारे संकल्प साथ दें।

शम्बूक : प्रणाम ऋषिवर।

वाल्मीकि : प्रणाम परिवर्तन के लिए समर्पित महर्षि ।
तुंगभद्रा : प्रणाम पिता ।
वाल्मीकि : प्रणाम संग्राम सहगामिनी पुत्री ।

[अंधेरा]

दृश्य ८

[आदिवासी अर्धवृत्त में बैठे हैं। बीच में मशाल जल रही है, दृश्य बीहड़ों जैसा है।]

एक : अयोध्या में अश्वमेध का अनुष्ठान हो रहा है।

दो : हां मान्धाता की चालीसवीं पीढ़ी भी साम्राज्य के प्रसार की भूख नहीं मिटा पायी। विन्ध्य से विदर्भ तक फैलकर भी नहीं ? (रुककर) जानते हो इस अभियान का सेनापतित्व कौन कर रहा है।

तीन : निषाद के परम मित्र लक्ष्मण के पुत्र चन्द्रसेन, अयोध्या की चतुरंगिनी के साथ।

चार : सूचना तो है।

एक : समाचार के गर्भ में कई अन्तर प्रश्न हैं।

दो : (लम्बी सांस लेकर) हां।

एक : भ्रमित हूं। राम साम्राज्य पिपासु कैसे हो सकते हैं। क्रिष्किन्धा का दायित्व, क्रिष्किन्धा वासियों के प्रतिनिधि सुग्रीव को सौंपा तब वह छवि धूमिल नहीं हुई, लंका का भार लंकावासियों में से विभीषण को सौंपा तब धूमिल नहीं हुई वह छवि ?

चार : और क्या। दण्डकारण्य, जनस्थान, जटायु गिरि, सुबेल किसी भी स्थान पर यह गंध नहीं मिली। राम कहीं व्यक्ति के रूप में नहीं उभरे। आये तो उदारवादी

संघर्षशील समूह के रूप में, शक्ति के रूप में, विचारक के रूप में।

एक : मेरा भी आपकी सहमति से भेद नहीं था। वय में कुछ बड़े होकर भी महर्षि शम्बूक, हम सभी के साथ धनुर्-अभ्यास करने जाते थे पंचवटी। कुटी बनाने से कृषि कार्य तक किया है राम ने। हमारे साथ मिल-कर।

दो : तब क्या सिंहासन ने राम को पथ-विमुख कर दिया। हनुमान, निषाद, सबरी के प्रति दर्शाया गया स्नेह मात्र दिखावा था—स्वार्थ पूर्ति का साधन ?

तीन : राम के राज्याचरण तो इसकी पुष्टि करते हैं।

चार : कैसे स्वीकार किया जाय इसे ? कैसे भूला जाय तारका विनाश से लेकर लंका महायुद्ध तक का अन्तराल ?

तीन : स्वाभाविक ही है। बढ़े हुए भू-भागों के सम्पन्न लोग अपने धन से सन्तुष्ट नहीं होते। सँजोया हुआ धन उन्हें लघु लगता है। तब वे आवश्यक समझते हैं अपनी बढ़ी हुई पिपासा की भूख को दूसरों की रोटी को छीनकर मिटाना। इसके लिए फैलाते हैं अपने हाथ पैर। ढूंढ़ते हैं। दूसरे भू-भागों में अपने व्यापार। अपने उत्पादन उपकरण लगाकर पहले बनाते हैं उन्हें आर्थिक दास।

दो : और इन सबके साथ अनिवार्य रूप से चलता है उनका राजतंत्र। यही है अयोध्या के साथ। यही होता है हर राजा के साथ।...राम को राजा रहना है तो देना होगा अश्वमेध का आदेश।

तीन : हां ! यहां तक कि किसी के प्राणोत्सर्ग को मानना होगा साधारण घटना।

दो : सिंहासन अपने स्वार्थ के लिए किसी के प्राण भी ले सकता है ?

एक : आवश्यक हो तो इससे आगे भी कुछ…। सिंहासन अस्त्र है धनिकों का।

चार : राम करेंगे यह सब ?

शम्बूक : (आकस्मिक प्रवेश के साथ) करेंगे, करेंगे। तपस्वी राम नहीं हैं—राजाराम हैं। परिवर्तन के लिए जन-जागरण का नायकत्व स्वीकारने वाले राम नहीं—बदलाव के लिए सेना को आवश्यक मानने वाले राजा राम हैं (उद्विग्न होता है)…मैं…मैं…।

एक : (आश्चर्य से) महर्षि रात्रि में…आप…विचलित।

शम्बूक : हाँ रात्रि में यहाँ किन्तु विचलित नहीं हूँ। तपोवन का मार्ग तय करके सीधे यहीं आया हूँ। अति आवश्यक वार्ता है। दण्डक परिषद बुलाओ। पर्णा निलय, पल्लव, चपला सभी को बुलाओ।…प्रकाश पुंजों की संख्या बढ़ाओ।

एक : महर्षि ?

शम्बूक : भाषा अत्यधिक अनोपचारिक हो गई है।

एक : नहीं महर्षि ! सम्भवतः विषय की गम्भीरता के लिए आपकी एकाग्रता आवश्यक है। हम सब बाह्य व्यवस्था देखते हैं—गुप्तचरों को आशंका हो सकती है।

शम्बूक : जागरूक हो।….शीघ्रता करो।

[सभी चले जाते हैं। शम्बूक मंच पर अकेले रह जाते हैं। कभी एक प्रकाश-पुंज बुझाते तो कभी दूसरा बुझा हुआ प्रकाश-पुंज जलाते। सोचने की मुद्रा में कुछ देर। किसी एक प्रकाश-पुंज को

देखते हैं। इसी बीच सभी जन आकर अपने-अपने स्थान ग्रहण कर लेते हैं।]

शम्बूक : मध्यासनी, सभाजन। दण्डक परिषद को मेरे अनुरोध पर असमय कष्ट हुआ है।

सभाजन : ...(स्वीकृति प्रतिक्रिया)

शम्बूक : अश्वमेध अनुष्ठान और सीता के पुनर्वनवास की सूचना से आप सब पहले ही से अवगत हैं।

सभाजन : ...(स्वीकृति प्रतिक्रिया)

शम्बूक : एक नवीन और महत्त्वपूर्ण सूचना दे रहा हूँ।

सभाजन : (सचेत होकर)

शम्बूक : दण्डक के विरुद्ध एक षड्यंत्र रचा जा रहा है अयोध्या की परिसीमा में।...वाराणसी के बुद्धिजीवियों का मुखर स्वर है उनमें।

मध्यासनी : विषय को और स्पष्ट करें महर्षि।

शम्बूक : अनेकों अवसरों पर मैंने निवेदन किया है कि मुझे महर्षि कहकर सबसे अलग न किया जाय।

मध्यासनी : सम्मानजनक सम्बोधन है—व्यक्तित्व बोध है।

शम्बूक : यही तो नहीं चाहता। टीले जैसा उभरा हुआ व्यक्तित्व हम सबके लिए बाधक होता है—इसे भी स्पष्ट कर चुका हूँ कई बार।

मध्यासनी : (सभी की ओर देखकर जैसे अभिमत चाहता है) आज से 'साथी' शब्द द्वारा सम्बोधित किया जायेगा आपको।

शम्बूक : (प्रसन्न होकर) सभाजन, विषय स्पष्ट करने का आदेश दें।

मध्यासनी : हां साथी।

शम्बूक : लम्बी योजना है शत्रुओं की हमारे विरुद्ध। धर्म का आधार बनाकर ब्राह्मण के बालक की मृत्यु के लिए

उत्तरदायी ठहराया जा रहा है हमारे आन्दोलन को ...सुनियोजित ढं ा से। और...और दूसरी ओर सीता को पुनः वन भेज कर स्थानीय लोगों की प्रतिक्रिया का आकलन किया जा रहा है, क्योंकि जनक ने उसे एक खेत से उठाकर पाला था। श्रमिकों, सेवकों और कारीगरों के बीच बढ़ता हुआ सीता के प्रति विश्वास और शक्तिशाली होता हुआ संगठन। एक दूसरा कारण है। इधर भी मोर्चा खोला जा रहा है हमारे दण्डक की ओर।

प्रखर : तो शासन तंत्र सुनियोजित ढंग से प्रहार की मुद्रा में है।

शम्बूक : हाँ प्रखर, शासन तंत्र केवल सेना और अस्त्रों के द्वारा ही शासन नहीं करता वह पुरोहित और धर्म-पंडितों का भी उपयोग करता है।

प्रखर : तब हमारे संघर्ष से निबटने के लिए धर्म का अवलम्ब इसीलिए तो नहीं लिया गया है।

शम्बूक : (थोड़ा हँसकर) स्पष्ट है। हमारी तो यह माँग ही है कि धर्म के आधिपत्य से राजा को अलग किया जाय। शिक्षा को देवालयों से मुक्त करके उसे सामान्य जनता को सौंप दिया जाय।

प्रखर : किन्तु लगता है उत्कोच पर विश्वास बनाये रखने वाली व्यवस्था, लूटने के धन को अपनी रीढ़ समझने वाला शासक तंत्र हमारी ओर से बहरा हो चुका है।

शम्बूक : हाँ, ठीक कहते हो।

प्रखर : (क्रोध से) तो हम भी तैयार हैं। पूरी शक्ति के साथ। हम प्रतिरोध करेंगे...विजयी होंगे।

शम्बूक : भाई प्रखर ! बहुत सलिल हो। इसे इतना सरल न

समझो। आक्रामक शत्रु के ऊपर तुरन्त ही नहीं टूट पड़ता। पहले विध्वंस करता है संचार साधन उसके रसद मार्ग और खाद्य पदार्थ।

चपला : हम पूर्णतया सजग हैं।

शम्बूक : हु-हूँ मैं कुछ और ही कहना चाहता हूँ। शत्रु ने हमारे आन्दोलन को एक नया नाम दे दिया है। वामधारी आन्दोलन। जो तप या श्रम हम सब कर रहे हैं उसे उल्टा कहा जा रहा है। अपढ़ तो यहाँ तक कहते हैं मैं उल्टा खड़ा हुआ तप कर रहा हूँ। (समवेत हँसी)

शम्बूक : (गम्भीरता से ही) जानते हैं इस उल्टा शब्द का प्रयोग क्यों किया जा रहा है? (उत्तर पाने की इच्छा से सबकी ओर देखकर) क्योंकि मैं जो कुछ कर रहा हूँ उसे रोक रहे हैं उनके वेद, शास्त्र, स्मृतियाँ। विरुद्ध हैं उनके यह सब। अनुमति नहीं देते हैं मुँह खोलने की ये ग्रन्थ। मानव होकर भी मानवीय जीवन का अधिकार नहीं देते हैं ये ग्रन्थ। इनका अनुपालन न करना द्रोह है—राजद्रोह। हमारे लिए दण्ड होगा समूल विनाश—मृत्यु दण्ड।

पल्लव : तब हमें क्या करना होगा सभाजन?

सभाजन : ··· ···।

शम्बूक : सीता के प्रति होने वाले अन्याय का प्रतिरोध करना होगा।

सभाजन में से एक : कैसे?

शम्बूक : अपना पूर्व निश्चित माँग-पत्र प्रस्तुत करके।

निलय : साथी शम्बूक, मेरे विचारों से बहुत कम सहमत हुए हैं। अतीत में जाऊँ तो बात स्पष्ट हो सकती है। संघर्ष की परिभाषा आर्य और अनार्यों तक ही सीमित रखी

जानी चाहिए थी। लंकेश की सहायता करनी चाहिए थी। देवताओं और आर्यों को प्रथम पंक्ति का शत्रु मानना चाहिए था।

शम्बूक : प्रिय निलय ! युवक हो ! साहस और विवेक दोनों हैं तुममें। आर्य और अनार्य संघर्ष की परिभाषा से तभी बाहर हो गये जब से आर्य यहाँ बस गये। मैं जिस संघर्ष की बात कर रहा हूँ उसका आरम्भ उस समय से हुआ जब से आदमी ने सम्पत्ति का रस चखा। इतिहास का अल्प ज्ञान हमें इस सत्य से विमुख कर देता है और जोड़ देता है हमें धर्म, जाति और सिंहासनों के संघर्षों से।

निलय : सम्पन्नों और विपन्नों के बीच होने वाले संघर्ष में तो विलम्ब हुआ। किन्तु शत्रु को अपनी वैचारिक सीमाएँ सुदृढ़ करने का अवसर क्यों दिया गया।

शम्बूक : विचारणीय प्रश्न है। इस संघर्ष को छेड़ने के दो उपयुक्त समय हो सकते थे एक तो तब, जब राम वनवासी होकर आये और अयोध्या संकट मे थी। शक्ति से जीत लेते हम उन्हे। दूसरा तब, जब राम लंका विजय करके अयोध्या वापस गए—उपहार या दान के रूप में कुछ माँगें प्राप्त कर लेते उनसे—यही न।

निलय : (चुप रहता है)

शम्बूक : हमारे आन्दोलन का अन्तिम गढ़ अयोध्या, अवन्तिका और लंका नहीं हैं। यदि ऐसा होता तो हमारे-तुम्हारे बलिदान से पहले ही किसी ने इसे जीतकर पूजा की पात्रता प्राप्त कर ली होती।

पर्णा : तो अभी सही, चित्रकूट की पहाड़ियों से चतुरंगिनी के साथ आ रहे अश्व का प्रतिरोध किया जाय।

पश्यवती, मन्दाकिनी और गायत्री के संगम पर युद्ध किया जाय।

शम्बूक : नहीं, अश्व अभियान हमारे लिए नहीं है। मैंने कहा न साम्राज्य के सर्प के फन चारों ओर फैले होते हैं। सम्राटों को जीतने की इच्छा से कहीं अधिक सजगता की आवश्यकता होती है, किसी आन्दोलन या विचार धारा को दबाने की। क्योंकि आन्दोलन लाख प्रयत्नों के बाद निर्मूल नहीं किए जा सकते।

चपला : और तब, जब कोई भूमि ही उत्पन्न कर रही हो, आन्दोलन के बीज।

शम्बूक : उचित कहा चपला ! प्रतिदिन उगल रही है यह धारा ऐसे लोग और दूसरी ऐश्वर्य और विलास के मानव।

सभाजन में से : जैसे भी हो इस व्यवस्था से लड़ने के लिए हमें घोषणा कर ही देनी चाहिए।

शम्बूक : विवेक खोने से जय का विश्वास छोड़ दो। पहाड़ से टकरा कर तुम्हें मिलेगा क्या ? अपना फूटा हुआ माथा। इस समय केवल वातावरण बनाने की आवश्यकता है। आर्यावर्त की सीमा के अधिक से अधिक कबीले राज्य की परिषदों की माँग करें, शिक्षा की माँग करें, मानवीय जीवन की माँग करें।

सभाजन में से : (लम्बी साँस खींचकर) कुछ नहीं होगा इससे, बस हम अपने जीवन से हाथ धो बैठेंगे।

शम्बूक : साथियों, आन्दोलन ही नई व्यवस्था की नींव होते हैं। और बलिदानों के धरातल पर रखी जाती हैं यह नींव विश्व का इतिहास साक्षी है कि किसी भी आन्दोलन का वृक्ष तब पल्लवित हुआ है जब आहतों ने उसे अपने रक्त से सींचा है। मैं मानता हूँ दण्डक मृत्यु कुण्ड में

बदल जाएगा। किन्तु परिवर्तन के लिए किए जा रहे युद्ध के लिए तुम्हारी नियति का औचित्य स्पष्ट हो जायेगा। बलिदान संघर्ष पर उपकार नहीं है, कर्त्तव्य की कड़ी है।

(सभी शम्बूक को देखते हैं)

शम्बूक : समय बहुत कम है। कितने लोग तैयार हैं आत्म आहुति देने के लिए। नये सूर्य की प्रकाश किरणों के लिए।

सम्वेत स्वरों में : हम सब तैयार हैं ?

शम्बूक : तुम्हारा नाम क्या है ?

(समवेत स्वर एक-एक करके दण्डक, दण्डक कहते जाते है)

शम्बूक : (अन्त में स्वयं कहता है) दण्डक। (थोड़ा रुककर) निलय ! मांग पत्र लेकर अयोध्या जाना है प्रातः।
पर्णा ! तुम्हें विदर्भ सूचना के लिए।
पल्लव ! विंध्य के निकटवर्ती क्षेत्रों में।

मध्यासनी : (व्यवधान देते हुए) शेष और...।
आर्यावर्त में।...रात्रि बहुत हो चुकी है। कार्य बड़ा है। अन्य कार्यक्रम कल की बैठक में तय कर लें तो असुविधा न होगी।...मैं सभा विसर्जित करता हूँ।

[अंधेरा]

दृश्य ९

[द्वार पर पहरा देता हुआ प्रतिहारी]

प्रतिहारी : (नारद को देखकर) प्रणाम महामुनि नारद।

नारद : आयुस्मान भव प्रतिहारी। धर्माधिकारी वशिष्ठ विश्राम कर रहे हैं क्या ?

प्रतिहारी : राजकीय कार्य में लगे हैं। आदेश हो तो निवेदन करूँ।

नारद : अवश्य। आवश्यक भी कहना।

(प्रतिहारी पुनः प्रणाम करके चला जाता है। वशिष्ठ प्रतिहारी के साथ ही बाहर आते हैं)

वशिष्ठ : महामुनि नारद अभिवादन ! अपरिचित से बाह्य कक्ष में क्यों खड़े हैं। अन्दर आइये।

नारद : राजकीय नियमों की मर्यादा का निर्वाह कर रहा हूँ।

वशिष्ठ : व्यंग्य की नवीन सीमाएं निर्धारित करते हैं आप। अब तो पधारिये।

नारद : एकान्त चाहता हूँ। विषय अयोध्या और सूर्य कुल की मर्यादा से सम्बन्धित है। समय है आपके पास ?

वशिष्ठ : निःसन्देह। सूर्य कुल का विश्वास हमें पीछे नहीं हटने देगा। चलिए।

नारद : उपवन में आइए। रक्षकों को विषय की गरिमा बताकर सचेत कर दो।

वशिष्ठ : ऐसा ही होगा।

(दोनों प्रस्थान कर जाते हैं। अंधेरे के साथ पुनः

प्रकाश में छोटा सा उपवन दिखाई पड़ता है। भूमितल पर बैठकर वार्ता प्रारम्भ करते हैं।)

नारद : मार्कण्डेय, मुदगल, वामदेव, काश्यप, कात्यायन, जवालिक गौतम और सारा ऋषि क्षेत्र धर्म की मर्यादा के ह्रास को लेकर चिन्तित है। मनु की निर्धारित वर्ण व्यवस्था का उल्लंघन खेदजनक है। विंध्य के उत्तर की घटनाएँ नई उलझनें खड़ी कर रही हैं।

वशिष्ठ : पूरे क्षेत्र की समस्याओं के लिए एक माँगपत्र तो राज्य को प्राप्त हुआ है।

नारद : माँग पत्र पर विचार किस स्तर पर हो रहा है ?

वशिष्ठ : अभी तो धर्माधिकारी ही उसकी छानबीन कर रहे हैं।

नारद : यानी धर्माध्यक्ष वशिष्ठ के अधीन हैं अभी ?

वशिष्ठ : अनेक शंकाएँ माँगपत्र को लेकर मेरे भी मन में हैं। क्यों न उनकी मानवीय और राजनैतिक माँगों को मान लिया जाय महाराज राम दण्डक में रहते हुए मान भी आए हैं।

नारद : वशिष्ठ जी, यह राजनेताओं और सम्राटों का विचार विषय हो सकता है किन्तु आपकी सीमा मनु के द्वारा खींची गई रेखा के आगे नहीं है।

वशिष्ठ : तो ऋषि ऐसे धर्म की बात तो नहीं कर रहे हैं। जिसके बारे में मेरा ज्ञान ही, न हो। मेरे मन से सभी धर्म त्याग, और सहिष्णुता ही सिखाते हैं। बीच में किसी राज्य को गिराने या किसी को बचाने की बात कहाँ से आ जुड़ती है ?

नारद : (हँसकर) कुछ और भी कहिएगा ?

वशिष्ठ : मेरा एक व्यक्तिगत मत है।

नारद : (उत्सुकता से) हूँ।

वशिष्ठ : आप सब की पीड़ा समाज या राष्ट्र को बचाने की

नहीं है। स्थिति यह है कि ज्ञानार्जन का अधिकार दक्षिण के लोग भी चाहते हैं। शिक्षा में बराबर का अधिकार भला आप क्यों स्वीकारेंगे ?

नारद : क्यों ? भला हम क्यों न चाहेंगे ? क्या हम किसी को शिक्षित बनाना चाहते हैं ?

वशिष्ठ : सो नहीं। उन्हें शिक्षा का अधिकार इसलिए नहीं देना चाहते कि इस पर आपका और केवल आपका एकाधिकार है। वे चाहते हैं कि इसका रोटी और क्षुधा के साथ सम्बन्ध।

नारद : (मौन)

वशिष्ठ : और दूसरी हानि है। दासों की संख्या में घटाव। फिर कहाँ मिलेंगे दास दान और सेवा के लिए।

नारद : मैं समझ नहीं पा रहा हूँ।

वशिष्ठ : किन्तु मैं समझ रहा हूँ इस संकट को। आश्रम व्यवस्था को बचाने के लिए परशुराम ने इक्कीस बार क्षत्रियों को पराजित किया। अन्ततोगत्वा दासों की आवश्यकता ने उन्हें बाध्य किया जनकपुर में क्षत्रियों से समझौता करने के लिए।

नारद : अर्थ।

वशिष्ठ : देवर्षि, आप मेरी परीक्षा ले रहे हैं। स्पष्ट बात है दोनों को दास चाहिए थे। क्षत्रियों को अपने वैभव के स्थायित्व के लिए और आश्रमवासियों को अपने चारागाह और दैनिक सेवाओं के लिए।

नारद : तो ये शब्द अयोध्या के धर्माधिकारी के हैं या दलितों के प्रतिनिधि के ?...छोड़िये। समाज के साथ व्यवस्था एक आवश्यक अंग होती है। धर्म उसका पथ-प्रदर्शक। फिर भला धर्म व्यवस्था से प्रभावित क्यों न होगा।

न्याय अन्याय का पक्ष भी, यह व्यवस्था ही निर्धारित करती है। एक जिसे अपराध कहती है दूसरी उसी को बलिदान। धर्म को इन्हीं व्यवस्थाओं के साथ अपने को जोड़ना होगा।

वशिष्ठ : तो आप कहना चाहते हैं कि मुझे वह सब मान लेना चाहिए जिसे अयोध्या की राजाज्ञा कहते हैं, सब कुछ स्वीकार लेना चाहिए जिसका उसकी हां में हां मिलाने वाले ऋषि समूह कहते है।

नारद : यदि नहीं तो वाल्मीकि की भांति विद्रोहियों के स्वर में स्वर मिला दीजिए।···किन्तु ऐसा आप नहीं कर सकते।

वशिष्ठ : क्यों ?

नारद : क्योंकि आप एक पुरोहित हैं।···बुद्धिजीवी। उसे अपने क्रान्तिकारी विचार तो प्यारे होते हैं उससे भी कहीं अधिक उसका अपना मान और सम्मान प्यारा होता है। फिर आपको तो राजकीय सुख की चिन्ता है।

वशिष्ठ : (प्रश्नसूचक दृष्टि से देखते हैं।)

नारद : आप कितना कुछ कर सकते हैं—मुझे ज्ञात है। विश्वामित्र आपके सर्वस्व हन्ता हैं फिर भी उन्हें क्षमा करना पड़ा आपको।

वशिष्ठ : उसकी भी मध्यस्थता आपने ही की थी।

नारद : और इसकी भी मध्यस्थता मैं ही कर रहा हूं।···प्रिय वशिष्ठ, आपके लिए नहीं, मेरे लिए नहीं, राम के लिए नहीं, ऋषि समूह के लिए नहीं, सम्पूर्ण आर्यावर्त के लिए उसी तरह सौगन्ध दिलाता है। मुझे आपके विवेक पर विश्वास है। विवाद को शेष कीजिए।

वशिष्ठ : (चुप)

नारद : इस व्यवस्था की रक्षा का सबसे बड़ा कवच धर्म है जिसे बिना तर्क के लोग स्वीकारते हैं···धर्म का ही सहारा लेना होगा इसे बचाने के लिए।

वशिष्ठ : (चुप)

नारद : काशी के पुरोहितों की योजना मेरे विचाराधीन है। लम्बे समय बाद एक घटना घटी है। युवावस्था में ब्राह्मण का इकलौता पुत्र मर गया है। वे इस मृत्यु को राजकीय घटना बनाना चाहते हैं।

वशिष्ठ : अवश्य मरेगा। कर्म के संघर्ष में जाति का जीर्ण कवच पहनकर कोई कब तक लड़ेगा। अवश्य मरेगा। और इस तरह के सारे कुकृत्यों को राजकीय आवरण में ही ढका जायेगा।

नारद : (झल्लाकर) यह आपका अपना विचार हो सकता है पर राम का क्या मत होगा ?

वशिष्ठ : राम स्वीकारते रहे हैं, स्वीकारेंगे।

नारद : मैं जानता हूँ, राम केवल मर्यादा का पालन करना जानते हैं। नई मर्यादा का सृजन करना नहीं। इस घटना को पूर्व निश्चित मर्यादा के बीच लाना हमारा काम होगा। राम को बाध्य होकर स्वीकारना होगा कि इसके कारण वह स्वयं हैं···उन्होंने मर्यादा का पालन नहीं किया।

वशिष्ठ : धर्म का और कितना मूल्य लगेगा ?

नारद : मेरे पास विवाद का समय नहीं है। केवल निवेदन का, केवल निवेदन का वशिष्ठ।

वशिष्ठ : (शून्य की ओर देखकर) राजाज्ञा है ना ?

नारद : (अनसुना करते हुए)...तो मैं विश्वास लेकर जा रहा हूँ।

वशिष्ठ : (शून्य की ओर देखते हैं चिन्ता मग्न से)

नारद : (वशिष्ठ का हाथ दोनों हाथों में लेकर) मै प्रस्थान कर रहा हूँ प्रिय।

वशिष्ठ : (पुनः शून्य में देखते निर्विकार मौन रहते हैं)

(नारद प्रस्थान कर जाते हैं। प्रकाशवृत्त वशिष्ठ पर सिमट कर लुप्त हो जाता है)

[अँधेरा]

दृश्य १०

[अनमने से राम मंच पर प्रवेश करते हैं। गावतकिया के सहारे लुढ़कते हुए मुकुट उतार कर एक ओर रखते हैं।]

राम : (दीर्घ निश्वास छोड़ते हुए) मधुपुरी के प्रशासन के लिए आज शत्रुघ्न को भी विदा कर दिया। भरत का प्रस्थान इससे पूर्व हो ही चुका है। फिर मैं और लक्ष्मण बचा। (अनायास जैसे कुछ स्मरण हो जाता है) किन्तु आज सीता नहीं है हमारे साथ। सीता···तन की कठोरता का उपचार सीता ही तो थी। क्लांत मन का गुरुभार सीता ही तो समेट लेती थी अपनी मधुर वाचलता में। उसकी उपादेयता का आभास तो वन-वास के अन्तिम वर्ष में ही हुआ जब वह लंका में थी। ···तुम कह रहे थे मैंने सीता के साथ अन्याय किया? मैं जानता हूँ तुम कौन हो। तुम वास्तविक राम हो। वनवासी राम, विशुद्ध कर्त्तव्य पुंज। तुम्हारा प्रश्न सर्वथा उचित है। सीता को अयोध्या के नागरिक होने का न्याय नहीं मिला वरन् मेरी पत्नी होने का उसे दण्ड अवश्य मिला। अन्य राजाओं की तरह और सम्राटों की तरह मैं भी अपनी कृत्रिम प्रतिष्ठा को मौलिकता का रूप देने में लग गया। सीता के प्रति अन्याय का पूरा लाभ मुझे तो मिल रहा था। मेरी

जै जैकार हो रही थी। मुझे नवीन उपाधियों से विभूषित किया जा रहा था। क्यों... अकस्मात सीता के प्रति अयोध्या की जनता में आक्रोश उत्पन्न हो गया। रातोरात मेरे प्रति विद्रोह की आग भड़क उठी। क्यों हुआ ऐसा। क्यों हुआ ?...जानबूझ कर भी न्याय मानदण्ड की औपचारिकता नहीं पूरी कर सका क्यों, क्यों भला क्यों... (चिन्तामग्न हो जाते हैं)

अंगरक्षक : (कुछ क्षण रुककर) सम्राट, महासचिव सुमन्त आए हैं।

राम : (माथे पर लगी उंगलियां हटाते हुए) हूँ...अच्छा... अच्छा...!

[अंगरक्षक चला जाता है]

महासचिव : निकटवर्ती भूखण्डों मे हमारी प्रशासकीय दृढ़ता और सन्तोष से सिंहासन के प्रति विश्वास में वृद्धि हुई है। सम्राट की जनप्रियता इसका एक मुख्य कारण है।

राम : ...(चुप)

महासचिव : राजकुमार शत्रुहन के लिए निर्दिष्ट मार्ग की सुरक्षा और अनुकूलता के लिए किए जा रहे प्रयासों से शासन सन्तुष्ट है। वे सहज गति से अपनी यात्रा पूर्ण कर रहे हैं।

राम : ...(चुप)

महासचिव : यज्ञ के लिए छोड़ा गया अश्व उत्तर में साम्राज्य का विजय पताका फहराता जा रहा है।

राम : ...(चुप)

महासचिव : राजकुमार भरत और राजकुमार शत्रुहन की राज्य सीमाएँ सुरक्षित हैं, उनमें आन्तरिक शान्ति है।

राम : ...(चुप)

महासचिव : स्थिति अयोध्या की थोड़ी चिन्ताजनक है। सीता के पुनर्वनवास को लेकर जनता में असन्तोष है।...वैसे सेठि पुत्र, साहूकार, राजवंश और उच्च वर्ण तथा संभ्रान्त सभाजन शासन के निर्णय से पूर्ण सन्तुष्ट हैं। आक्रोश लघु किसानों, श्रमिकों और छोटी जाति के कर्मियों में है। उसे निश्चिन्तता से दबाया भी जा सकता है किन्तु...

राम : किन्तु क्या मंत्रिवर ?

महासचिव : राज्य को एक मांग पत्र प्राप्त हुआ है।

राम : विन्ध्याचल के उत्तर पार्श्व पर शैवल पर्वत पर बसी जातियां का न ?

महासचिव : हाँ सम्राट ! शम्बूक नेतृत्व कर रहा है उनका। हमारी सेना और सीमा सुरक्षा बल व्यर्थ सिद्ध हो चुके हैं। उनका आन्दोलन ऊपर से अहिंसक लगता है किन्तु किसी भी दबाव का वे भरपूर शक्ति से उसी परिमाण में उत्तर देते हैं।...सीता के पुनर्वनवास को लेकर सबसे अधिक असन्तोष उसी क्षेत्र में है।...मंत्रिमण्डल उसे अशान्त क्षेत्र घोषित करने के लिए एक मत से सहमत है।

राम : तो मेरा अनुमोदन चाहते हैं आप ? माँग पत्र पढ़िए ?

महासचिव : (पढ़ता है) अयोध्या के सम्राट के नाम। वर्ण व्यवस्था पर आधारित समाज के श्रेणीकरण की व्यवस्था अपनी उपयोगिता खो चुकी है। मानव ने अपने विकास के कई पड़ाव पार कर लिए हैं। जिसका सीधा प्रभाव सामाजिक विषमता पर पड़ा है। शक्तिशाली और सम्पन्नों निर्बल और निर्धनों के बीच एक कभी न समाप्त होने वाली खाई बढ़ती जा रहा है। जिस

परिमाण में उत्पादन का लाभ शक्तिशालियों को मिला है उसका एक अंश भी हमारे भाग में नहीं आया। जीने योग्य अंश लेकर ही हम कब तक अपने अस्तित्व को बनाये रख सकते हैं। इन माँगों को लेकर अभी तक अलग-अलग बात उठाई गई है। पहली बार सारे दलित वर्गों ने सामूहिक स्वर का आवाहन किया है। आपका वनवास काल में हमारे प्रति न्याय और हमारे साथ समानता का व्यवहार हमें बाध्य करता है कि इसकी स्मृति हम आपको कराएँ। आपके द्वारा बनाए गये प्राप्ति के लिए स्वयं के मार्ग पर पूरी सजगता के साथ बढ़ते हुए यह माँग पत्र प्रस्तुत कर रहे हैं। हमारा संघर्ष शोषित, पीड़ित मानवता के लिए है, न कि देवालय या राज्यालय की प्राप्ति के लिए। आगामी पीढ़ी के दुख दर्द के लिए इस संघर्ष को आगे बढ़ाना पड़ा। हमें विश्वास है कि आप इन माँगों पर विवेक से निर्णय करेंगे। :—

—उच्च वर्गों द्वारा मनमाने ढंग से हमारी जमीन हथियाने पर रोक लगे।

—हमारी स्त्रियों के साथ बलात्कार और सेना तथा राज्य अंग रक्षकों द्वारा किए जा रहे अत्याचार बन्द किए जाएँ।

—राज्य पंचायत बनाई जायँ। हमारी पैदावार का समुचित अंश हमें दिया जाय। वस्तुओं का मूल्य उत्पादन के आस-पास रखा जाय।

—हमें आजीविका चलाने के लिए नये तकनीकी ज्ञान प्राप्त करने से न रोका जाय।

—हमारे शारीरिक और मानसिक विकास को शासन

अपने लिए भय की संज्ञा न दे।

—हमें अपनी भाषा और संस्कृति के विकास का पूरा अवसर दिया जाय।

—वनवासी राम के रूप में जो सुविधाएँ रीछ, बानर कबीलों को प्राप्त हुई थीं उन्हें अन्य कबीलों को बिना भेद-भाव के प्रदान किया जाय।

—किष्किन्धा, लंका और हनुवर देशों के नागरिकों के समान पूरे देश में एक जैसी नागरिकता का मान-दण्ड रखा जाय।

—क्षेत्रीय विषमता को कम करने के लिए हमारे श्रम और प्रयासों को रावणीय संज्ञा देकर नष्ट न किया जाय।

—हमारी आलोचना को विध्वंसात्मक न माना जाय।

—निकटवर्ती देशों के छापामारों से तथा सीमा सुरक्षा दल के अत्याचारों से हमारी रक्षा की जाय।

—अपनी माँगों के लिए हमें जनमत बनाने, प्रदर्शन करने, गोष्ठियाँ तथा चर्चा करने का पूरा अधिकार दिया जाय।

—पुस्तकालयों पर हमारे लिए लगी रोक को समाप्त किया जाय।

—सेवाओं में जाति के स्थान पर योग्यता को आधार बनाया जाय।

—व्यवस्था के आर्थिक ढाँचे में आमूल परिवर्तन किया जाय।

—हम पुनः विश्वास करते हैं कि शासन इन माँगों को पूरा करके आगामी संघर्ष से देश को बचायेगा। हमारी एकता अमर है। हमारा संघर्ष अमर है।

राम : हूँ...

महासचिव : अब आप ही आदेश दें उपाय क्या है ? मांगे मान लेने का अर्थ होगा सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक ढांचे का पूरा-पूरा बदलाव। आमूल परिवर्तन जैसी उनकी अन्तिम मांग है भी।

राम : तब इस विद्रोह को दबाने के लिए क्या मार्ग सुझाया है, मंत्रिमंडल ने।

महासचिव : कुचलना होगा हमें इस आन्दोलन को, नहीं तो बचा बचाया भी चौपट हो जायेगा, अभी तो प्रारम्भ है। कृषि योग्य क्षेत्र बंजर पड़ता जा रहा है। जुताई करने वाले दास उपज का तीन चौथाई अंश मांग रहे हैं। आश्रम पशुविहीन हो गये हैं। कोई दास केवल भोजन और वस्त्र पर पशु चराने को तैयार नहीं है। हमारे घरों की स्त्रियां गृह कार्य स्वयं कर रही हैं, क्योंकि दासियों ने सामूहिक अस्वीकृति का स्वर दिया है।

राम : मंत्रिवर आन्दोलन को दबाने के उपाय बताते हुए कहीं बहक गये। लगता है इस आन्दोलन ने सबसे अधिक भयभीत तो आपको ही किया है।...उपाय बताइए ?

महासचिव : किसी भी तरह शम्बूक का बध इसका एक मात्र उपाय है।

राम : तो आपका विश्वास है कि शम्बूक इस आन्दोलन का अन्त और प्रारम्भ दोनों ही हैं ?

महासचिव : मैं विगत अनुभवों के आधार पर इसी निष्कर्ष पर पहुँचता हूँ।

राम : मंत्रिवर ! मानता हूँ कि दो पीढ़ियों के राज्यकाल का लम्बा अनुभव आपका मार्ग दर्शन कर रहा है। फिर भी आप भूल जाते हैं कि जन विद्रोह के स्वर हवा के

प्रत्येक कण में व्याप्त होते हैं। वे किसी एक व्यक्ति या समूह को नष्ट करने से नष्ट नहीं हो जाते। रक्त बीज, महिषासुर, राहु और केतु के नेतृत्व में देवताओं के शोषण अराजकता और विलास के प्रति जो विद्रोह छिड़ा वह भी क्या समाप्त हुआ है। शस्त्र पर विश्वास किसी भी आन्दोलन का अन्तिम उपाय होता है। मैं भी रावण के विरुद्ध अस्त्र उठाना नहीं चाहता था। वह मेरी सीमा थी। इसे याद रखिये कि जन सामान्य द्वारा उठाया गया अस्त्र सुनियोजित विवेक पर आधारित होता है जिसे पराजित करना किसी सम्राट या शासन की शक्ति से बाहर होता है। क्या सह सका रावण वह प्रहार ?

महासचिव : आपके द्वारा रावण के प्रति छेड़े गये विद्रोह के अभियान और शम्बूक द्वारा चलाये गये आन्दोलन में अन्तर है। आपने विश्व मानवता के कल्याण के लिए प्रयास किया था तो शम्बूक दासों की घटिया लड़ाई लड़ रहा है।

राम : मंत्रिवर ! विचार करते समय किसी को भी पक्ष और विपक्ष पर सत्य का पक्षधर होना चाहिए। शम्बूक तो संघर्ष के उस अनवरत मार्ग पर चलता ही जा रहा है। जिसे मैंने राज्य लोभ में त्याग दिया है। लक्ष्मण की तरह वह अन्याय और शोषण के विरुद्ध मर मिटने वाला व्यक्ति है। स्वार्थी तत्वों ने दासत्व को मनुष्यता का अर्थ निकाल दिया है। शम्बूक उसे पुनः स्थापित करना चाहता है। कहाँ से हुआ उसका घटिया संघर्ष ?

महासचिव : यह विचार श्री राम के हो सकते हैं—इससे अयोध्या के सम्राट का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

राम : अयोध्या के सम्राट का सहमत बिन्दु क्या होगा ?

महासचिव : जिसका निर्देशन ऋषिकुल, ब्राह्मण, पुरोहित वर्ग धनिक और गणमान्य नागरिक करेंगे ।

राम : और वे जो इस श्रेणी में नहीं आते यानी जिन्हें श्रमिक अथवा दास के अतिरिक्त किसी अन्य नाम से पुकारा नहीं गया, जिन्होंने इस सम्राट राम को आदर्श राम के रूप में प्रस्तुत करने में अपना सर्वस्व होम कर दिया। विश्वामित्र आश्रम से अयोध्या आगमन तक कवच बने, मार्ग दर्शक नेत्र बने । क्या उनका प्रतिनिधि नहीं है अयोध्या का सम्राट ।

महासचिव : सम्राट भगवान का प्रतिनिधि है । जिसे ऋषिकुल और ब्राह्मणों द्वारा बताये गये मार्ग पर ही चलना होता है ।

राम (विचलित होकर) तो नहीं चाहिए मुझे वह मार्ग । मैं विद्रोह करता हूँ इस मर्यादा का ।

महासचिव : नवीन मर्यादा के सृजन का साहस किसी ने नहीं दिखाया । मान्धाता, दधीचि, हरिश्चन्द्र किसी ने भी नहीं । सम्राट धनिक बुद्धिपरक और सम्मानित लोगों की परिभाषा के घेरे में ही होता है । ऐसा न करने पर वे साधारणतया विद्रोही नागरिक का व्यवहार अपने सम्राट के प्रति भी कर सकते हैं । जो लोग सीता की पवित्रता उसके प्रति लोगों का बढ़ता स्नेह कुछ ही क्षणों में धूल में मिला सकते हैं, जो शम्बूक के आन्दोलन को धर्म से जोड़कर ब्राह्मण के बालक की मृत्यु से उसका हेतु ठहरा सकते हैं वे आपको पत्नी के लिए रघुकुल की मर्यादा को धूल-धूसरित करने वाला कहकर मृत्यु दण्ड भी दे सकते हैं । प्रशासन उनका है

आप प्रतिनिधि हैं। मेरा विचार है आप अपने को एक बार और बलिदान कर दीजिए, रघुकुल की मर्यादा बचाइये और जाकर स्वयं शम्बूक का वध कीजिए।

राम : तो मुझे तर्क पर नहीं भावनाओं पर जीना होगा। परीक्षाओं और कुण्ठाओं के बीच जीना होगा।

महासचिव : निश्चय ही कलंकित होने से बचने के लिए सम्राट को मान्यताओं में जीना होगा।

राम : मान्यताओं, परम्पराओं, व्यक्तित्व गरिमा। मैं विक्षिप्त हो जाऊँगा, मंत्रिवर मैं विक्षिप्त हो जाऊँगा। (महासचिव कुछ देर ठहर कर प्रपत्र छोड़कर चले जाते हैं।)

राम : (सामान्य होकर प्रपत्र पर दृष्टि डालते हुए) शम्बूक तू ही बलिदानी बनेगा। तू ही कहलायेगा क्रान्ति का अगुवा। तूने सिद्ध कर दिया कि क्रान्ति की अगुवाई सम्राट नहीं कर सकते। उनका नेतृत्व तुम जैसे जननायक करेंगे। जन समुदाय के बीच से आये श्रमिक। मैं तो अयोध्या के सम्राट से हार गया। तुमसे भी हार गया हूँ शम्बूक। तुमसे भी। और कर रहा हूँ हस्ताक्षर राजाज्ञा प्रपत्र पर। (लेखनी उठाकर हस्ताक्षर कर देते हैं।)

[अँधेरा]

दृश्य ११

[शम्बूक काष्ठ चारपाई पर अधलेटा लेखनी लिये कुछ लिखने की मुद्रा में सोचता हुआ ।]

राम : (स्वगत) केवल दाढ़ी बढ़ गयी है । केश कुछ लम्बे हो गये हैं और कोई परिवर्तन नहीं आया इसमें । वही तेज, वही तीक्ष्णता, वही लगन। धन्य हो सुव्रत विक्रमी, तपस्वी धन्य हो शम्बूक । तुम पर क्यों न समर्पित हों लाखों करोड़ों के हृदय नायक । क्यों न हों ।

[अपलक उसे देखते हुए कुछ ठहर कर]

तुम्हीं हो शम्बूक ! तुम्हारे लिए ही मुझे आदेश हुआ था कि जानते हुए भी तुम्हें चारों दिशाओं में ढूंढूं । पुष्पक विमान लगाया गया इस कार्य के लिए ।···हूं-हूं—मैं ही इस प्रतिबद्ध योजना के नाटक का पात्र बना । कौन क्षमा करेगा मुझे शम्बूक ? इस अपकार्य के लिए क्षमा कहाँ मिल सकती है मुझे शम्बूक ?···· कहीं···नहीं···कहीं···नहीं···(विह्वलता से कहीं खो जाते हैं, पुनः संयत होते हुए) मुझे अवसर नहीं देना होगा इससे नेत्र मिलाने का । कहीं राम, सम्राट की आज्ञा का उल्लंघन न कर जायें । रघुकुल का सड़ा हुआ वचनबद्धता का शव कहीं बिखर कर नीचे न गिर जाय । कहीं मैं सदैव के लिए टूट न जाऊँ···बालि

वध के लिए छुपा था तब तो रण-कौशल था। वीरता पर आँच तो नहीं आयी थी। पर आज—आज जीवन में प्रथम बार भीरुता क्यों ? मुझे इस समय इसका वध करना ही होगा।···क्यों करूँ इसका वध ? यह तो मेरा सखा रहा है। निरपराध है, अहन्ता है, विवेकी है, सत्य निष्ठ है और फिर युद्ध के लिए प्रस्तुत भी तो नहीं है···तब—तब क्यों करने जा रहा हूँ इसका वध।···तर्क क्यों कर रहा हूँ मैं। राजाज्ञा पर हस्ताक्षर करते समय तो यही समझ कर हस्ताक्षर किया था कि राम तर्क का मानव नहीं भावनाओं का पशु बन चुका है।···फिर···फिर क्यों उठते हैं बार-बार वही प्रश्न ?···क्यों···चलो राम···नहीं।···तो राम नहीं चलेगा···किन्तु सम्राट राम को चलना ही होगा। (और आंखें बन्द करके शम्बूक पर कृपाण का प्रहार कर देते हैं।)

[शम्बूक का वक्ष बेध जाता है। शरीर लहूलुहान हो जाता है। वह काष्ठ चारपाई से नीचे लुढ़क जाता है]

शम्बूक : (आह का स्वर जोर से निकलता है। थोड़ा स्थिर होकर शीश ऊपर उठाते हुए) कौन मित्र राम···तुम नहीं कर सकते यह अपराध। मेरी तरह तुम भी तो समर्पित थे क्रान्ति के लिए। साथी थे हमारे। फिर··· फिर···तुम···तुम···नहीं···नहीं कर सकते मेरा वध।

राम : (रक्त से सनी कृपाण को देखते हुए भर्राये स्वर में) सम्राट राम बधिक है तुम्हारा। हाँ शम्बूक—सम्राट राम।

शम्बूक : बहुत शीघ्र बदल गये मित्र ! अब तो समय नहीं रहा

मार्ग पर लाने का। तुम्हारा विवेक ही तुम्हें दिशा देगा।

राम : (रूँधे गले से ही) आज तुम्हारा तर्क सच हुआ और भ्रम चूर हो गया। क्रान्ति की अगुवाई मुझसे न हो सकी।

शम्बूक : मेरा तर्क तथ्यों पर आधारित था। भौतिक स्थितियों की देन था। आगे और भी स्पष्ट हो जायेगा राम। मुझे अपनी मृत्यु का दुःख नहीं हैं पर दुःख है तो यह कि तुम उन्हें यह नहीं समझा सके कि शम्बूक की मृत्यु उस बढ़े हुए जन स्वर का अन्त नहीं बन सकती।

राम : (विह्वलता से) मैं···मैं···कैसे समझाऊँ मित्र कि मैं उन्हें तर्क से···।

शम्बूक : पक्ष या विपक्ष का तर्क सुनने का समय नहीं है मेरे पास। साकेत महाराज्य के प्रतिनिधि के रूप में मेरे प्राण लिये जा रहे हो तो एक सन्देश मेरा भी कह देना कि शम्बूक के रक्त से वह कड़वाहट बुझी नहीं है और भी बढ़ रही है विप्लवी टोलियाँ। (और तेज साँस लेने लगता है)

राम : मैं···मैं नहीं जाऊँगा अयोध्या।

[कुछ आदिवासियों का प्रवेश]

सामूहिक स्वर में से एक : निश्चय ही नहीं जा सकोगे अयोध्या। हमें ज्ञात है तुम्हारी सेनाएँ भी अश्व यज्ञ का बहाना लेकर समीप ही हैं। तुमने पुरानी मित्रता के आवरण में महर्षि का वध किया है। हम पहचानते हैं सामन्ती मगर आँसुओं को।

दो : (एक अन्य से) प्रखर। आज तुम्हारी शस्त्र अनुसंधान विद्या की पूर्ण परीक्षा है।

तीन : (एक को इंगित करके_आज अभी इसी समय यहीं युद्ध की घोषणा की जाय।

चार : भाषा विभाग को छोड़कर सारे विभाग युद्ध के लिए उत्पादन में लगा दिये जायँ।

पाँच : हम सब को मर मिटना है।

[सामूहिक स्वर में विप्लव]

शम्बूक : (हाथ से इंगित करके उन्हें अपने पास बुलाकर) प्रखर, मल्ल तुम···सब अपनी प्रयोगशालाओं में जाओ। शत्रु तुम्हें भावुक बना देने की कई चालें चलेगा। अभी यह पहली चाल है। तुम सब इस महा अभियान के स्तंभ हो। हम सब भवन के ऊपरी पत्थर हैं—हमें ढहना ही है। किन्तु तुम—तुम सब नींव के पत्थर हो—हो सकता है कि तुम कभी न दिखायी पड़ो। लेकिन क्रान्ति का भवन खड़ा होगा तुम पर ही तुम्हारे कन्धों पर ही। तो···तो···जा···ओ··· अ···प···नी प्रयोगशाला···।

[और सदैव के लिए शान्त हो जाता है।]

[पाँचों व्यक्ति एक दूसरे को देखकर कुछ निर्णय की सी स्थिति में होकर प्रणाम करके चल देते हैं। राम भी खड्ग भूमि पर रखकर प्रणाम करते हैं और वहीं किसी विचार में डूबे रहते हैं।]

तुंगभद्रा : (शान्त और स्थिर गति से कुछ महिलाओं के साथ प्रवेश करती है। कुछ देर शम्बूक को देखती रहती है फिर राम पर दृष्टि गड़ाकर) क्या साकेतराज राघवेन्द्र को अपराधी की पत्नी को प्रणाम करने का अधिकार है ?

राम : लज्जित न करो देवि तुंगभद्रा ।

तुंगभद्रा : कौन आपको लज्जित कर रहा है। कोई स्त्री ? उनके पतियों की हत्या करके शीश झुकाकर खड़े होने का आपका नाटक नया तो नहीं है।···फिर स्त्रियां बाणों से भीख तक आपकी ऋणी भी हैं।

राम : मेरे और महर्षि शम्बूक के सम्बन्धों को नाटक की संज्ञा मत दो देवि ! आपसे भी मेरा परिचय नवीन नहीं है।

तुंगभद्रा : तो पहचान गये। और मैं भी पहचान गई। मुझे जब महर्षि के बध का समाचार मिला और बध की स्थिति का विवरण मिला तो मैं भी पहचान गई थी। मैंने कहा कि यह और कोई नहीं हो सकता समर्थ राम ही होंगे।

राम : मैं अवश था।

तुंगभद्रा : अवश। बदले हुए राम से मुझे अवसाद नहीं। परिवर्तन के लम्बे अभियान में क्रान्ति का बीड़ा उठाने वालों का कर्म पग-पग पर मूल्य लगाता है। फिर आप तो अभिजात कुल के हैं। आपको क्या ? आप प्रदर्शन कर सकते हैं, श्रम नहीं। उदघाटन कर सकते हैं, परिक्रमा का समापन नहीं। प्रतिवाद है तो सम्राट राम से।

राम : ······।

तुंगभद्रा : दलित और शोषित वर्गों का मांग पत्र प्राप्त हुआ।

राम : हां।

तुंगभद्रा : उस पर किस दायित्व का निर्वाह किया राज्य ने।

राम : मैं विचार कर रहा हूं।

तुंगभद्रा : झूठ का अवलम्ब सदैव वैतरणी नहीं बनता। क्या

प्रतिवादी को अपना पक्ष प्रस्तुत करने का अधिकार नहीं है। इसे तो प्राकृतिक न्याय भी उचित मानता है। प्रकृति भी उपचार का अवसर देती है। पर अयोध्या का न्याय दण्ड सम्भवतः नहीं।

राम : प्रमाण क्या है।

तुंगभद्रा : (व्यंग्य से हँसकर) प्रमाण। सीता को पुनः वनवास देते समय क्या आपके न्याय दण्ड ने निष्ठा का परिचय दिया। सीता को अपनी बात भी रखने का अवसर दिया—नहीं। महर्षि शम्बूक को वध के पूर्व एक बार भी आपने उनसे उनके अपराध के बारे में पूछा नहीं।

राम : न्याय दण्ड को केवल वाद प्रस्तुत होने पर ही सन्तुष्टि के आधार पर दण्ड देने का अधिकार है।

तुंगभद्रा : सन्तुष्टि। कैसी सन्तुष्टि! राम मुझे ज्ञात है क्रान्तिकारी और सत्ताधारी दोनों ही भाषाएँ बोलने में आप चतुर हैं। मुझे ज्ञात है राजा के भी वर्गीय हित होते हैं। उन पर लेश मात्र भी आंच आने पर वह सन्तुष्ट हो जाता है। और अपराधी को कठोरतम दण्ड देता है। उसके वर्गीय हितों की उपेक्षा करने वाला विद्रोही, देशद्रोही और जाने किन-किन अपराधों का दोषी होता है।

राम : मैं व्यक्तिगत रूप से इस निर्णय से सन्तुष्ट नहीं था।

तुंगभद्रा : सन्तुष्ट तो बहुत लोग नहीं थे। बाल्मीकि वशिष्ठ और स्वयं आपके महामंत्री सुमन्त भी। बाल्मीकि को छोड़कर सभी ने किसी न किसी बहाने अपने को सन्तुष्ट कर दिया। किसी ने कर्त्तव्य निष्ठा के नाम पर गले उतार लिया तो किसी ने कुल वचन के नाम पर अनर्थ का बीणा उठा लिया।

राम : देवि तुंगभद्रा आप अन्यथा न लें, मेरे विषय को।

तुंगभद्रा : नहीं मैं अन्यथा न लेकर पूरी सर्तकता के साथ आपकी व्यथा पर सोच रही हूँ। अपने हित को पूरा ध्यान में रखते हुए आपने शैव और वैष्णवों का संघर्ष स्वयं शिव की पूजा करके समाप्त किया। विभीषण और सुग्रीव को राज्य सौंप कर अपने प्रति लोगों की श्रद्धा बटोरी ! वनवासी जीवन में अपनी स्वयं की रक्षा के लिए जन संगठक का चेहरा पहना। यह सब होते हुए भी मैं अन्यथा लूं—यह तो आप हैं जिन्हें जाने क्यों बार-बार अन्यथा का भय हो रहा है।

राम : मेरी सेबरी और निषाद की मित्रता आवरण नहीं थी।

तुंगभद्रा : कदापि नहीं, शूद्र ऋषि मतंग को दिया जाने वाला आदर भी आवरण नहीं था। आपके पूर्वज आर्य वैदिक युग में शूद्र बलबूथ को पलकों पर उठाते थे। उसे भी आवरण नहीं कहा जा सकता। राघव ! आप मुझे समझा रहे हैं ! आवरण और निरावरण सम्बन्धों में स्थायित्व का अन्तर होता है। निषाद और सेबरी की मित्रता यदि निरावरण होती तो आप उनके वंशजों के रक्त से होली न खेलते। महर्षि शम्बूक का वध न करते। त्याग दिया होता आपने एक बार फिर अयोध्या का राज्य सिंहासन और चीवर पहन कर अपने पूर्व परिचित जन जागरण की ध्वनि को प्रसार देते। ऋषि मतंग के तेज और बलबूथ की शक्ति को स्वीकारना तो आपके लिए प्राणदायक था।

राम : सम्भवतः मैं स्पष्ट नहीं कर पा रहा हूँ।

तुंगभद्रा : किन्तु मैं स्पष्ट कर रही हूँ। ठीक उसी तरह जैसे भील, कोल, किरात, बानर, रीछ, निषादों को अपने स्वार्थ के लिए गले लगाया। उनका उच्छिष्ठ खाने के लिए

लालायित रहे ठीक उसी तरह आपके पूर्वजों को मतंग और बलबूथ के सामने समर्पण करना पड़ा।

राम : यह विषय धर्म से जोड़ दिया गया है।

तुंगभद्रा : हर विषय धर्म से जुड़ जाता है। जो कुछ थोपना होता है वह सारे का सारा धर्म के साथ जोड़ दिया जाता है। धर्म भी आपका एक अस्त्र है। अस्त्र का अर्थ होता है जिसका उपयोग दूसरे पर प्रहार के लिए किया जाय। इन्द्र का अहिल्या के साथ बलात्कार धर्म के अनुसार अपराध नहीं भूल थी, सूर्य का अपनी पुत्री के साथ दुराचार धर्म के अनुसार भूल थी, अपराध नहीं था। (आवेश में) मैं कहती हूँ वे भी अपराधी हैं। उनका बध किया जाता, उन्हें नष्ट कर दिया जाता। किन्तु ऐसा नहीं हुआ। वे आज भी देवता हैं आज भी पूज्य हैं। अपराधी है तो केवल शम्बूक !

राम : देवि, इतिहास की भूलों में जाने से यहाँ कोई प्रयोजन नहीं।

तुंगभद्रा : किन्तु भविष्य में आपके इतिहास के निर्माण में हमारी आवश्यकता होगी। आपकी वीरता का बखान करने के लिए आवश्यकता शत्रु को शक्तिशाली दिखाने की पड़ेगी। अन्यथा आप परम पराक्रमी कैसे घोषित हो सकेंगे। हमें लाख चाहकर भी तुम नष्ट नहीं कर सकते। राम तुम्हारी वीरता की प्रतिछाया के रूप में महर्षि शम्बूक की हत्या तुम्हारे साथ होगी। कोई नहीं मिटा पायेगा इसे।

राम : मैं निरुत्तर होता जा रहा हूँ देवि। मैं वहाँ भी निरुत्तर हो रहा था जब इस आन्दोलन को अकाल की छाया से जोड़ा जा रहा था।

तुंगभद्रा : अकाल ! कैसा अकाल ? दुर्भिक्ष वह तो होना ही था जब काम करने वाले अपने हाथ को समेट लेंगे तो खेतों को बीज कौन देगा, पानी कौन देगा, और सुकोमल शरीर की सेवा करके रति थकान कौन मिटाएगा। सचमुच अकाल होगा। कहीं यह अकाल सतत् न हो जाय।

राम : भाषा के सौन्दर्य में तथ्य को मत बांधिये। मेरा आशय वर्षा न होने से है। मुनि समूह का मत है, साकेत के बड़े भूभाग में वर्षा न होने का कारण मानव का पूज्यों के प्रति विद्रोह है। अपात्र तपस्या करने लगे हैं।

तुंगभद्रा : तो हमारे घर की आग आपका वेसन्दर हो गई। तपस्या तो हमसे ही सीखी है आपने। हम इसे इक्ष्वाकु वंश की धरोहर कैसे मान लें। कहिए तो तब से मान लें जब से इस अभिजात वर्ग ने हमें पराजित किया। आप तो मर्यादा और धर्म पालन के एकाधिकारी हैं। बताइए ना हमारे तप से और अवर्षा से, हमारे तप से और किसी की मृत्यु से कोई सम्बन्ध है ?

राम : यदि मैं अपनी पराजय स्वीकार कर लूं तो इस अपराध से मुझे मुक्ति मिल सकती है ?

तुंगभद्रा : क्या ताड़का से प्रारम्भ किया गया अपराध तुंगभद्रा से क्षमा मांग कर इति श्री पर पहुँचेगा ? मानवीय दृष्टिकोण व्यक्तिगत अपराध को क्षमा कर सकता है ? यद्यपि सीता के प्रति किया गया अपराध व्यक्तिगत नहीं था। सीता सहिष्णु थी। उसने उसे स्वयं पर उतार लिया किन्तु मैं ऐसा नहीं कर सकती। मैं भी मानव हूं। हमें भी ताप शीत का अनुभव होता है। मुझे भी पति वियोग है किन्तु क्या आपने हमारे नेत्रों

में एक भी अश्रु देखा। यह कोई अलौकिक कारण नहीं है। महर्षि शम्बूक की दी गई दीक्षा है। कर्त्तव्य के सामने अहम् और व्यक्तित्व का त्याग। और एक आप हैं जो कर्त्तव्य की अन्तराल दुहाई दिए जा रहे हैं।

स्त्रियों में से एक : दीदी रहने दो वनवासी राम वापस नहीं हो सकते। राम रावण विश्वामित्र सभी समझौता वादी हैं। आज तो महर्षि का तर्क स्वतः सत्य हो गया। आपने विरोध में तर्क दिये थे निर्मूल हो गये ना।

तुंगभद्रा : (अश्रुपूरित नेत्रों से) हाँ अपर्णा आज निर्मूल हो गया मेरा तर्क महर्षि अपना बलिदान देकर अपनी बात की सत्यता स्थापित कर गये।

पर्णा : तब राम को अपशब्द कहने से होगा क्या ?

तुंगभद्रा : राम पर हमारा अधिकार था हमारे सहयोगी रहे थे।

पर्णा : हर सहयोगी साथी तो नहीं बन सकता। मत जोड़ो दीदी कुछ अपनी ओर से। यह सभी मार्ग के सहचर हैं। इनके सहारे भविष्य की योजना निर्धारित करना विवेक का उपहास है महर्षि के वे शब्द याद नहीं— राम को राजा होना है तो देना होगा अश्वमेध का आदेश।

तुंगभद्रा : हाँ याद है पर्णा।

पर्णा : तो यह भी शब्द याद होंगे कि मेरी मृत्यु संस्कार नहीं क्रान्ति का चरण बनेगी।

राम : देवि, मेरा जीवन परीक्षाओं का संकलन रहा है। परिवार की शान्ति के लिए राज्य त्यागा, अयोध्या की मर्यादा के लिए सीता का बिछुड़ना स्वीकारा और लोक मर्यादा के लिए मित्र शम्बूक के पवित्र रक्त से यह कलंकित हाथ रंगे। मुझे क्षमा कर दो देवि। यह

राम, तुम्हारा राम, तुमसे क्षमा मांग रहा है।

तुंगभद्रा : नहीं राम, तुमसे हमारा कोई वैर नहीं है। मैं ही महर्षि की स्थापित विचार प्रक्रिया से कुछ क्षणों के लिए अलग हो गई थी। मैं अपने को समझाने के लिए तर्क वितर्क करती थी किन्तु आज वे सारी विसंगतियां जाती रहीं। मुझे मेरा आगे का पड़ाव दिखाई दे रहा है—अमरावती, लंका, अयोध्या सहित मुझे वे सारी सीमाएँ दिखाई दे रही हैं जिन्हें महर्षि हम सबको दिखाना चाहते थे। मुझे वे सारे राम, इन्द्र और रावण दिखाई दे रहे हैं जो बार-बार इसी तरह आयेंगे। हमें दिखाई दे रहे हैं अतीत, भविष्य और वर्तमान के बलिदान जो न जाने कितने शम्बूक बने लेटे हैं। हर बार इतिहास एक ही पृष्ठ जोड़ रहे हैं, हर बार। हमें नहीं उलझना है पड़ावों के अवरोधों से (साथ की स्त्रियां को देखकर) चल रही हैं अबाध गति से हमारी प्रयोगशालाएँ। हर दिन मूढ़ रहा है हमारा मस्तिष्क अपने अस्तित्व का सुदृढ़ आयाम। अयोध्या से प्रारम्भ की गई महर्षि की यात्रा रुकी नहीं है राम—रुकी नहीं है।…(कहकर धीरे-धीरे तुंगभद्रा उस काष्ठ चारपाई की ओर बढ़ती है जहां से शम्बूक लुढ़क कर भूमि पर गिरे थे। शम्बूक का शव निकट ही पड़ा है। राम शीश झुकाये खड़े हैं। अन्य स्त्रियां मुट्ठियां तानकर प्रयाण की मुद्रा बनाती हैं। तुंगभद्रा लेखनी उठाकर लिखने की मुद्रा बनाती हैं। प्रकाशवृत्त तुंगभद्रा पर सिमट जाता है। पार्श्व से ध्वनि होती है—'प्रारम्भ'।)

(अंधेरा)



